शारदा ग्रन्थमाला-4

आद्यशक्ति का दिव्य स्थल

उमानगरी

डा० महाराजकृष्ण भरत

प्रकाशन विभाग
संजीवनी शारदा केन्द्र
आनन्दनगर, बोडी, जम्मू दूरभाष : 2501480

शारदा ग्रन्थमाला - 4

आद्यशक्ति का दिव्यस्थल

उमानगरी

लेखक

डा. महाराजकृष्ण भरत

प्रकाशक

संजीवनी शारदा केन्द्र

आनन्द नगर बोडी, जम्मू

प्रकाशक

प्रकाशन विभाग
संजीवनी शारदा केन्द्र
आनन्द नगर, बोड़ी, जम्मू - 180 002
दूरभाष : 0191-2501480
E-mail : shardakendra31@rediffmail.com

संस्करण : प्रथम 2005 ई. संख्या - 1000

मूल्य :

प्रस्तावना

अपने ही देश के भीतर विस्थापन की यातना सहते हुए अस्तित्व-रक्षा की समस्या से जूझता जन समूह अपने विगत इतिहास और सांस्कृतिक परम्परा के शेष बचे स्रोतों की रक्षा के लिये चिन्तित दिखाई दिया, ऐसा होना स्वाभाविक था। भौतिक सम्पदा, घर-द्वार, ज़मीन-जायदाद के खो जाने की उतनी चिन्ता नहीं है, जितनी चिन्ता इस बात की है कि एक अल्पसंख्यक कश्मीरी अपनी पहचान खो रहा है।

प्रश्न यह है कि हज़ारों वर्षों से पल्लवित इस पहचान को कैसे सुरक्षित रखा जा सकता है। आज से केवल एक हज़ार वर्ष पूर्व बहुसंख्यक कश्मीरी आज देश-निष्कासित अल्पसंख्यक के रूप में जानवरों के समान जीवन जीने के लिए विवश हैं।

कश्मीर के इतिहास में यह स्थिति कई बार उत्पन्न हुई है। इसमें सन्देह नहीं कि इतिहास अपने आप को दोहराता है लेकिन इस संकटकालीन स्थिति में अपनी पहचान को बनाये रखना न केवल हमारे लिये आवश्यक है, अपितु सम्पूर्ण राष्ट्र की राष्ट्रीय एकता और अखण्डता के लिये भी नितान्त आवश्यक है।

संजीवनी शारदा केन्द्र ने इसी उद्देश्य से एक योजना तैयार की है जिसमें कश्मीर के वैभवशाली अतीत के स्वर्णिम पृष्ठों की स्मृति सुरक्षित रखने हेतु इतिहास के यथार्थ को ऐतिहासिक साक्ष्यों के आधार पर, जन-मानस के सम्मुख प्रस्तुत किया जायेगा ताकि कोई अविवेकी दुस्साहस करके इतिहास के तथ्य को विकृत न कर सकें।

कश्मीर संस्कृत भाषा और साहित्य के अध्ययन का प्रमुख केन्द्र रहा है। हमने महान विभूतियों को जन्म दिया है जिन में वसुगुप्त, सोमानन्द, उत्पलदेव, अभिनवगुप्त, क्षेमेन्द्र, मम्मट, कल्हण पण्डित, जगद्धरभट्ट, बिल्हण, वामन, रुद्रट, आनन्दवर्धन, उद्भट, कय्यट, भामह, क्षेमराज, जोनराज, श्रीवर, शुक आदि विश्व-विख्यात शैवाचार्य, साहित्यकार, चिन्तक, इतिहास-लेखक और व्याकरण-पण्डित कश्मीर की भूमि से ही उपजे देश-रत्न हैं जिन्होंने अपने साधनात्मक जीवन का क्रियारत आदर्श स्थापित कर समाज और वर्ग को एक नई दिशा प्रदान की।

कश्मीर के प्राचीन महान तीर्थस्थल, संस्कृति केन्द्र, विद्यापीठ, भव्य मन्दिर और आश्रम, शिवालय एवं शक्तिस्थल आज ऐतिहासिक साक्ष्य बन कर पुरातत्ववेत्ताओं को खोज और अनुसन्धान की प्रेरणा देते हैं।

प्राचीन इतिहास के जाज्वल्यमान बुद्धिजीवियों, विचारकों, दार्शनिकों, कलाकारों, साहित्यकारों, शासकों और धर्माचारियों के विषय में जन-हित उपयोगी पुस्तिकाओं के लेखन, प्रकाशन और वितरण की योजना तैयार की गई। निर्णय यह हुआ कि नामी लेखकों को इस प्रकार की सामग्री तैयार करने हेतु आमंत्रित किया जाये, और एक-एक प्रतिभासम्पन्न विभूति पर अलग से एक-एक पुस्तिका, जिसमें कम से कम 30-40 पृष्ठों पर प्रामाणिक, ज्ञानवर्धक, सर्वजन उपयोगी सामग्री दी गई हो, तैयार की जाये। इस प्रकार एक पुस्तिका केवल एक ही व्यक्ति अथवा संस्था से संबंधित रहेगी। पुस्तिका लेखन हेतु विद्वान बन्धुओं को नियत पारिश्रमिक देय होगा। पुस्तिका का प्रकाशन संजीवनी शारदा केन्द्र की ओर से होगा और प्रकाशन के सारे अधिकार केन्द्र के पास सुरक्षित रहेंगे।

जनता और सर्वसाधारण के लिए कल्याण भावना से प्रेरित होकर यह निश्चित किया गया कि पुस्तिका का मूल्य इस प्रकार से निश्चित किया जायेगा कि एक सामान्य देश बन्धु भी इसको आसानी से खरीद सके।

आरम्भ में यह निश्चित हुआ कि निम्नलिखित दस विषयों को लेकर विद्वान बन्धुओं को लेखन हेतु आमंत्रित किया जाये :

- **अभिनवगुप्त, क्षेमेन्द्र, श्रीभट्ट, परमानन्द, सुय्या पण्डित, शिति कण्ठ, अरॅनिमाल, ललितादित्य, आनन्दवर्धन**
  – इन पर जीवनी, व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर आधारित परिचयात्मक विवरण होगा।
- **'उमानगरी'**– *इस पर ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर इसके प्राचीनकालीन महत्व पर विशेष विवरण होगा।*

यह भी निश्चित हुआ है कि इस वर्ष शारदाष्टमी के महान पर्व तक तैयार की गई पुस्तिकाओं का विमोचन होगा। दूसरी किस्त में कश्मीर के सांस्कृतिक इतिहास के कुछ महत्वपूर्ण अंगों को लेकर पुस्तिकायें तैयार की जायेंगी।

इस पुनीत कर्तव्य-कर्म को पूरा करने के लिये सर्वकल्याण हेतु सेवाभाव ही हमारा मार्गदर्शक होगा। इस विश्वास के साथ इस काम को हाथ में लिया जा रहा है।

मुख्य सम्पादक

अनुक्रम

आद्यशक्ति का दिव्यस्थल

उमानगरी

आध्यात्मिक चिंतन-मनन की तपोभूमि कश्मीर वैदिक काल से ही भारतीय दर्शन, धर्म एवं संस्कृति का प्रमुख केन्द्र रहा है। शिव स्थलों एवं शक्ति पीठों का यहां बाहुल्य था। यहां भगवान सूर्य, विष्णु, शिव एवं गणेश के आदि स्थल रहे हैं वही तुलमुला में माता क्षीरभवानी, श्रीनगर में शारिका देवी एवं महाकाली, ख्रिव में ज्वाला देवी, बारामुला में शैलपुत्री, हंदवाड़ा में भद्रकाली, पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर में शारदा माता, टिकर (गुशी) में महाराज्ञी, मार्तण्ड़ में भर्गशिखा तथा उमानगरी में आद्यशक्ति भगवती उमा का दिव्य स्थल विराजमान है। पण्डित शुक भट्ट द्वारा रचित राजतरंगिणी में ऐसे 22 शक्ति पीठों का उल्लेख है, जिनमें अपना वैशिष्ट्व्य लिए हुए हैं - श्रीउमा देवी अस्थापन, जिसे साधु-संतों ने भी आत्मज्ञान की अनुभूति पर सिद्धपीठ की संज्ञा दी है।

कश्मीर के ज़िला अनंतनाग से लगभग बीस किलोमीटर की दूरी पर उत्तरसू क्षेत्र में प्राकृतिक सौंदर्य से आच्छादित तथा आध्यात्मिक आकर्षण से अपनी छटा बिखेरता हुआ देदीप्यमान भगवती उमा देवी का ऐसा विरला अलौकिक स्थल है जहां सती ने उमा (पार्वती) के रूप में जन्म लेकर भगवान शिव को

फिर से वररूप में पाने की अघोर तपस्या की थी। *सम्भवतया सम्पूर्ण भारत वर्ष में यह ऐसा अकेला पावन स्थल है जहां भगवती ओंमकार रूप में पांच कुण्डों में विरजित हैं। यही वह स्थल है जहां शिव–शक्ति की आराधना कुण्डों के रूप में की जाती है।* अठारहवीं शताब्दी के अंतिम चरण में इस अद्‌भुत स्थल को फिर से खोज निकालने का श्रेय पं. शिवराम कौल 'जलाली' को जाता है, जो बाद में स्वामी शिवानन्द के नाम से जाने गए।

कल्हण पण्डित ने 'राजतरंगिणी' में भी इस तथ्य का उल्लेख किया है कि कश्मीर में ऐसा कोई स्थल शेष नहीं है जहां कोई न कोई तीर्थ रहा हो। विस्थापन से पूर्व जिला अनंतनाग में जहां भी कश्मीरी पण्डित रहा करते थे, वहां पवित्र स्थलों के रूप में **देवीबल** या **नागबल** हुआ करते थे। पर आज ये आस्था स्थल कहीं खण्डित तो कहीं भग्नावशेषों के रूप में हैं। कुछ ही स्थान ऐसे हैं जहां पर अभी भी ये स्थल सुरक्षित बचे हुए हैं। इस जिले के कुछ प्रमुख स्थलों को यहां रेखांकित किया जा सकता है।

इस क्षेत्र में विश्वप्रसिद्ध श्रीअमरनाथ गुफा का श्रद्धेय तीर्थ स्थल है, जहां प्रत्येक वर्ष लाखों की संख्या में श्रद्धालु हिम की बूंदों से स्वयं निर्मित अद्‌भुत विलक्षण शिवलिंग के दर्शन करने आते हैं। यह वार्षिक यात्रा श्रावण शुक्ल पक्ष पुर्णिमा के दिन पावन छड़ी मुबारक के नेतृत्व में सम्पन्न होती है। इस क्षेत्र में मार्तण्ड में सूर्यदेव का मंदिर, वेरीनाग में वितस्ता

के उद्गम स्रोत का नीलकुण्ड, अहरबल जलप्रपात से ऊपर स्थित कौंसरनाग का झील, पहलगाम में प्राचीन मामलेश्वर मन्दिर, थ्जवोर (बिजबिहाड़ा) में प्राचीन शिव मंदिर, काज़ीगुंड के समीप मां जगदम्बा मंदिर (खन्बरिनीय), मंजगाम में माता राज्ञा, अंनतनाग में पुरातन नागबल मंदिर आदि प्रमुख हैं।

इसके अतिरिक्त साधक, मुनि, योगी, शैवाचार्यों तथा धर्मनिष्ठ विद्वानों, प्रचारकों के आश्रम एवं केन्द्र भी रहे हैं जिनमें गौतमनाग में गौतम ऋषि का सिद्ध स्थल है तथा अच्छाबल के पास नागडंडी में विवेकानन्द केन्द्र उल्लेखनीय है।

उमानगरी में आद्यशक्ति

उमानगरी का स्थल कुटहार परगना के घने वनों के मध्य पीरपंचाल की गोद में स्थित है। यहां पर भगवती उमा का प्रमुख गोलाकार मंदिर शिव-शक्ति कुण्ड में विराजित है। शेष पावन तीन कुण्ड (ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र) अपनी भव्यता के साथ भक्तों को आशीर्वाद प्रदान करते हैं। इन तीन कुण्डों की घेराबंदी में लकड़ी का प्रयोग किया गया था जबकि शिव-शक्ति कुण्ड की घेराबंदी लोहे से की गई थी। मंदिर परिसर को स्थानीय लोग देवीबल (देवी का कुण्ड) के नाम से अभिहीत करते हैं। परिसर की चार दीवारी विशेष पत्थरों से की गई है तथा इसका मुख्य द्वार दीवानखानः के मध्य सुसज्जित था।

तीन मंजिला 'दीवानखानः' का भव्य भवन तीर्थ के महंत का निवास स्थान होता था। इस भवन में लंगर की भी व्यवस्था थी तथा एक हवन कुण्ड भी था। बाहर से पधारे विशिष्ट साधू

–संतों, आचार्यों, मनीषियों के लिए दूसरे मंजिल पर ठहरने की व्यवस्था आरक्षित रहती थी, तथा ऊपरी मंजिल में एक हॉल भी था। धर्मशाला और दीवानखान: की वास्तुकला देखते ही बनती थी, जिस की नक्काशी कुशल वास्तुकारों ने की थी। मंदिर परिसर में हवनशाला तथा 'धूनी सऽब' (साहिब) का स्थल भी था पर आज यह धरोहर वहां आतंकवाद की काली छाया में नष्टप्राय हो गई है।

उमानगरी में भगवती उमा के प्रमुख मंदिर का विवरण इस प्रकार से है :

1. *मंदिर में विकसित कमल पर करीब पांच फुट ऊंची संगमरमर की अलौकिक अद्‌भुत करुणामय उमा देवी की दिव्य मूर्ति प्रतिष्ठापित की गई है। मां के दाएं हाथ में 'चामर' तथा बाएं में 'कमल' हैं। उनके दोनों ओर दो शेर रजोगुण और तमोगुण की प्रवृत्ति को प्रदर्शित करते हैं।*
2. *यह भव्य मंदिर पानी की सतह से करीब 37 फुट ऊपर है तथा छः स्तम्भों पर विद्यमान है। मंदिर का गोलाकार व्यास 15 फुट है। यह आकार सार्वभौम सत्ता को प्रदर्शित करता है।*
3. *शिव-शक्ति कुण्ड करीब 7 फुट गहरा है तथा इसका व्यास 42 फुट है। इसकी संरचना ॐ जैसे बिंदू रूप में की गई है, जो तुरीयावस्था का प्रतीक है।*
4. *कुण्ड के समक्ष अर्द्धचंद्राकार रूप में मण्डप है, जहां पर भक्त चिंतन-मनन कर मनोवांछित फल पाते हैं।*

5. शिव-शक्ति कुण्ड का जल मंदिर परिसर से बाहर प्रवाहित होता है जिसकी धारा से लोग अपने को अभिमंत्रित करते हैं।

निर्माण कार्यों की शुरुआत

इस भव्य स्थल की दिव्यता देखते ही बनती है। मां का प्रकाश यहा चारों ओर व्याप्त है। इस शांत रमणीय वातावरण में भक्त आनंदित, प्रफुल्लित हो जाते हैं। सबसे पहले 1772 में यहां **स्वामी शिवानन्द** (1772-1790) ने 'धूनी' की स्थापना की थी। उसी समय उन्होंने इन पवित्र कुण्डों के भी प्रत्यक्ष दर्शन किए थे। उन्होंने भगवती का मंदिर भी बनाया था। आगे इस निर्माण कार्य को **स्वामी रामानंद (1782-1862), स्वामी राजानंद, स्वामी शुद्धानंद, स्वामी वासानंद** तथा **स्वामी शिवानंद-द्वितीय (1886-1933)** ने जारी रखा। वासानंद ने यहां धर्मशाला और हवन शालओं का निर्माण कराया। 1910 ई0 में स्वामी शिवानंद-द्वितीय ने सभी पावन कुण्डों की घेराबंदी तथा शिव-शक्ति कुण्ड के बगल में देवी का मंदिर बनवाया। यह मंदिर आयतकार में था। **स्वामी कृष्णानंद** (1910-1968) तथा **स्वामी सत्यांनद** (1968-2000 तक) के समय भी यहां पुनर्निर्माण के कार्य होते रहे, पर इन कार्यों को सातवें दशक में तब और गति मिली, जब इस स्थल पर उमा देवी मंदिर के पुनर्निर्माण का कार्य प्रारम्भ हआ। जून 1973 में इस कार्य के लिए आधारशिला रखी गई थी और तत्पश्चात् 1975 के आसपास पुनर्निर्माण का कार्य सम्पन्न हुआ।

1975 में ही भाद्रशुक्ल पक्ष अष्टमी (शारदा अष्टमी) के दिन

इस मंदिर में भगवती उमा की दिव्य मूर्ति प्रतिष्ठापित की गई। इस अवसर पर महायज्ञ का भी आयोजन किया गया था, जिसमें हजारों की संख्या में श्रद्धालुओं ने भाग लिया। इस पुनर्निर्माण के कार्य में **स्वामी स्वयमानंद** का उल्लेखनीय योगदान रहा है जो श्रीनगर से यहां पर उमा देवी की प्रेरणा से ही आए थे।

उल्लेखनीय है कि श्रीनगर में गणेशघाट (गणपतयार) में स्वामी जी का आश्रम भी था। उन्होंने भक्तों की सहयोग राशि से उमा देवी मंदिर के पुनर्निर्माण की पहल की। इस आयोजन में तत्कालीन स्वामी सत्यानंद का भी उनको भरपूर सहयोग प्राप्त हुआ। मूर्ति स्थापना के समय से ही प्रत्येक वर्ष स्वामी स्वयमानंद यहां पर यज्ञ का अनुष्ठान करने लगे। यह क्रम 1989 तक ही जारी रह सका। तत्पश्चात् सशस्त्र आतंकवाद के कारण विस्थापन का काल खण्ड प्रारम्भ हुआ।

तीन प्रकार के अनुष्ठान

हर वर्ष उमानगरी में तीन प्रकार के अनुष्ठान हुआ करते हैं, जिनमें विस्थापन से पूर्व आसपड़ोस के गांव और अन्य जिलों से भी भक्तजन उत्साह के साथ भाग लेते रहे हैं। प्रायः अधिकांश श्रद्धालु एक दिन पूर्व ही आकर भजनमण्डली और कीर्त्तनों का आनंद लेते थे। रातभर भगवती की स्तुतियां गाते-गाते वे थकते नहीं थे। श्रद्धालु यज्ञ के आयोजनों में अपना भरपूर सहयोग प्रदान करते थे। वे प्रसाद ग्रहण करने के बाद ही अगले दिन अपने गंतव्यों की ओर निकल पड़ते थे। ***उमाजयंती का पावन दिन तो भारतीय जनमानस के लिए किसी भी पर्व से कम नहीं होता***

है। भक्तजनों का यह समागम अपने में अनूठा और अद्वितीय रहा है। ये तीन अनुष्ठान इस प्रकार से हैं :

1. **उमा जंयती के उपलक्ष्य में चैत्र शुक्ल पक्ष नवमी (अप्रैल) के दिन महायज्ञ का अनुष्ठान।**
2. **भाद्रपद शुक्ल पक्ष अष्टमी (शारदा अष्टमी, सितम्बर) के दिन महायज्ञ का आयोजन।**
3. **पोष शुक्ल पक्ष प्रतिपदा (दिसंबर) के दिन स्वामी शिवानंद की पुण्यतिथि के अवसर पर श्राद्ध व कीर्त्तन।**

ज्ञातव्य रहे कि 8-9 दिसम्बर 1992 को घाटी में कट्टरपंथियों ने कश्मीर में लगभग 24 मंदिरों एवं अनेक धर्मशालाओं को भारी क्षति पहुंचाई। 1986 के आक्रमण में ऐसे खंडित मंदिरों की संख्या इससे भी तीन गुणा अधिक हैं। 1992 के अंत में इन जूननी आक्रमणों से उमा देवी का मंदिर परिसर भी अछूता न रह सका। मंदिर परिसर में लाखों की चल-अचल सम्पत्ति तोड़ी व जलाई गई तथा मूर्तियां खण्डित की गईं। दो सौ दो वर्षों से संजोकर रखी गईं अप्राप्य एवं अलभ्य आराध्य पूंजियों को भी राख कर दिया गया। इस विरली विरासत में स्वामी शिवानंदजी की जटा, ख्राव (चरण-पादुका), पीर चौकी तथा धूनी सऽब को गिनाया जा सकता है। धर्मशाला एवं हवन शालाओं को जला दिया गया। विशालकाय उमा देवी की मूर्ति को कट्टरपंथियों ने शिव-शक्ति कुण्ड में धकेल दिया, साथ ही कुण्डों की घेराबंदी को भी नष्ट किया गया। अब केवल वहां देवी का मंदिर और पावन कुण्ड ही विराजमान हैं।

भौगोलिक संदर्भ

उमानगरी हिमालय के दामन में जिला अनंतनाग में स्थित है। बहुत पहले से इस नगरी तक पहुंचने के लिए कई सड़क मार्ग उपलब्ध हैं। उत्तरसू गांव पहुंचकर एक अन्य सम्पर्क मार्ग द्वारा उमानगरी गांव पहुंचा जा सकता है। उत्तरसू से उमानगरी का फासला डेढ़ किलोमीटर है। अनंतनाग से उमानगरी के मध्य जो गांव आते हैं, उनके नाम इस प्रकार हैं - ब्राकपोरा, बुलबुल नौवगाम, अच्छाबल, नागडंडी, खुंदरू, नोवगाम, शांगस तथा उत्तरसू। जम्मू-श्रीनगर राष्ट्रीय राजमार्ग पर जम्मू से श्रीनगर जाते हुए जवाहर सुरंग को पार करते ही इस नगरी तक पहुंचने के जो सड़क मार्ग खुलते हैं, उनका संक्षिप्त ब्योरा निम्न हैं :

1. लवरमुंडा-वेरीनाग-कुकरनाग-अच्छाबल-उत्तरसू- उमानगरी (करीब 33 किलोमीटर)

2. लवरमुंडा-वेरीनाग-दयालगाम-अशीशपोरा, अनंतनाग - अच्छाबल - उत्तरसू-उमानगरी (45 किलोमीटर)

3. लवरमुंडा-काजीगुंड-व्यस्सु-वनपोह-खन्नाबल- अनंतनाग (करीब 25 किलोमीटर) अच्छाबल, उत्तरसू, उमानगरी (45 किलोमीटर)

4. अनंतनाग, सरनल (वाया गौतम नाग मार्तण्ड तक एक अन्य सम्पर्क मार्ग भी), मार्तण्ड, रणवीर सिंह पोरा, किहीरबल, अच्छाबल, उत्तरसू, उमानगरी (29 किलोमीटर)

राष्ट्रीय राजमार्ग पर लवर मुंडा के पास एक अन्य सम्पर्क मार्ग वेरीनाग की ओर मुड़ता है तथा खन्नाबल पहुंचते ही दाईं ओर का एक और मार्ग हमें अनंतनाग की ओर ले जाता है। अनंतनाग से मार्तण्ड होकर अच्छाबल पहुंचना अधिक घुमावदार है। अनंतनाग से पहलगाम जाने वाली सड़क पर 6 किलोमीटर की दूरी पर ऐतिहासिक गांव मार्तण्ड स्थित है। मार्तण्ड से अच्छाबल की दूरी 9 किलोमीटर है। ऐतिहासिक मार्तण्ड गांव में प्राचीन मार्तण्ड मंदिर है तथा मार्तण्ड-अच्छाबल मार्ग पर पुरातन मार्तण्ड मंदिर के भग्नावशेष अपनी व्यथा स्वयं ही बयान कर रहे हैं। मार्ग और भी हो सकते हैं पर इन मार्गों से प्रत्येक मार्ग का केन्द्र अच्छाबल ही है।

साकार रूप

क्या हम मोक्षदायिनी उमा देवी के साकार रूप का बखान करने में समर्थ हो सकते हैं ? कदापि नहीं ! उनके रूप का जितना वर्णन किया जाए कम है। उनका अलौकिक रूप बहुत ही देदीप्यमान है। उनके दर्शनों से भक्तों को परमशांति और आनंद मिलता है।

मां सुनहरे रंग की साड़ी पहने हुई हैं तथा वह नानाप्रकार के अनोखे रत्नों से शोभायमान हैं। सुवर्ण सदृश्य गौरी की दो भुजाएं हैं। उनके दाएं हाथ में सफेद चामर तथा बाएं में नीला कमल भक्तों के कल्याण का सूचक है। मां के गले में मुक्ताहार तथा मस्तक पर मुकुट सुशोभित हैं। उनके इस विलक्षण रूप का वर्णन इस प्रकार किया गया है :

सुवर्णसदृशीं गौरीं भुजद्वयसमन्विताम्
नीलारविन्दं वामेन पाणिना विभ्रतीं सदा।।
सुशुक्लं चामरं धृत्वा भर्गस्याङ्गेच दक्षिणे
विन्यस्य दक्षिणं हस्तं तिष्ठन्तीं परिचिन्तये।।

कुण्ड के रूप में भी भगवती उमा की पूजा की जाती है। वह ब्रह्म कुण्ड में ब्रह्मी, रुद्र कुण्ड में रौद्री, विष्णु कुण्ड में वैष्णवी, शिव कुण्ड में शिवा तथा शक्ति कुण्ड में शक्ति के रूप में विराजित हैं। साकार और कुण्ड के रूप में मां भक्तों का सर्वदा कल्याण करती हैं। जब भगवान शिव सृष्टि का संहार

करने के लिए ताण्डव नृत्य करते हैं तो मां उमा लास्य नृत्य द्वारा फिर से जगत का कल्याण करती हैं।

यहां पर **पंचस्तवी** के एक श्लोक को उद्धृत करना प्रासंगिक होगा जिस में पंचस्तवीकार ने पांच भागों में मां के गुणों का वर्णन करने के बाद भी अपने को अकिंचन ही मांना है :-

स्थूलासु मूर्तिषु महीप्रमुखासु मूर्तेः
कस्याश्चनापि तव वैभवम्-अम्ब यस्याः।
पत्या गिराम् अपि न शक्यत एव वक्तुं
सा-सि स्तुता किल मयेति तितिक्षितव्यम्।।

(अर्थात् जिस जगत ईश्वरी के स्थूलरूप पृथ्वी आदि पांचों महाभूतों में से किसी एक के स्वरूप का तथा आप के वैभव का वर्णन करने के लिए बृहस्पति भी समर्थ नहीं हैं वहां मुझ से की हुई यह स्तुति माता सहन कीजिए, इस धृष्टता के लिए क्षमा कीजिए।)

(पृः 97)

यही धृष्टता भी हमने मां के स्वरूप का वर्णन करने में की है। पंचस्तवीकार के कहने का अभिप्राय यही है कि जहां बृहस्पति भी मां का वर्णन करने में मूक हो जाते हैं, वहां रचनाकार किस गिनती में है।

आविर्भाव की कथा

कश्मीर की धरती पर भगवती उमा के आविर्भाव की कथा का प्रसंग हमें पुराणों, उपनिषदों तथा अन्य धार्मिक एवं राजनीतिक इतिहास ग्रन्थों में भी मिलता है। **वेद, केन उपनिषद्, तैत्तिरीय आरण्यक, तंत्र, आगम, सुर्यपुराण, नीलमतपुराण, श्रीरामचरितमानस, महाभारत, राजतरंगिणी, पंचस्तवी** तथा **दुर्गासप्तशती जैसे अनेक ग्रंथों** तथा **हिन्दू धर्मकोशों** में भी हमें **देवी के आविर्भाव से सम्बंधित** अनेक प्रसंग मिलते हैं। **मानमंजरी नाममाला**, में हमें उमा देवी के नाम के निम्न पर्याय मिलते हैं :

'अपर्णा, ईश्वरी, गौरी, गिरिजा, मुंडा, चंडिका, अंबिका', भवा, भवानी, आर्या, मेनकजा, अजः सर्वमंगला तथा माया। (हिंदी कथा कोष, पृ:18)। सतीसर, वितस्ता, पार्वती, दुर्गा तथा अन्नपूर्णा भी इनके ही अन्य नाम हैं।

पंचस्तवीकार ने **पंचस्तवी** के पांच भागों में भगवती की कई नामों से स्तुति की है। उनमें से कुछ ही दिव्य नामों को यहां पर रेखांकित किया जा रहा है। मां के ये नाम हैं - *अम्बा, त्रिपुरा, चण्डी, सरस्वती, शवरी (शिकारिन रूप) शाम्भवी (शम्भु की शक्ति) भवानी, जगतमाता, गौरी, रुद्राणि, संकर्षणि (शंकर को अपनी ओर आकर्षित करने वाली माता), हैमवती (उमा), शर्वाणि (शिव की शक्ति), महामाया, त्रिभुवनेश्वरी,*

वागीश्वरी, विश्वमातः, त्रयम्बक पत्नी, पार्वती, कात्यायिनी, भैरवी, शैलराज तनया (हिमालय की पुत्री), गिरिसुते आदि।

श्रीदुर्गाष्टोत्तरशत नामस्तोत्रम् में तो भगवान शंकर ने पार्वती को दुर्गा को प्रसन्न करने के लिए 108 नाम गिनाए हैं जिनमें ॐ सती, साध्वी, दुर्गा, त्रिनेत्रा, शाम्भवी, अपर्णा, लक्ष्मी, चण्डमुण्डविनाशिनी, महिषासुरमर्दिनी, मातङ्गी, भद्रकाली, कात्यायनी, तपस्विनी, नारायणी, अग्नि ज्वाला, रौद्रमुखी आदि नाम गिनाए जा सकते हैं। श्री दुर्गासप्तशती में तो देवी की नौ मूर्तियों का वर्णन हैं। इन्हीं नौ मूर्तियों को नवदुर्गा कहते हैं। उनके पृथक-पृथक नाम बतलाये गए हैं। प्रथम नाम शैलपुत्री है। शैलपुत्री अर्थात गिरिराज हिमालय की पुत्री 'पार्वती देवी'। यद्यपि ये सबकी अधीश्वरी हैं, तथापि हिमालय की तपस्या और प्रार्थना से प्रसन्न होकर कृपापूर्वक उनकी पुत्री के रूप में प्रकट हुईं। यह बात पुराणों में प्रसिद्ध है। इन देवियों में दूसरी ब्रह्मचारिणी, तीसरी चन्द्रघण्टा, चौथी कूष्माण्डा, पांचवी स्कन्द माता, छठी कात्यायनी, सातवीं कालरात्रि, आठवीं महागौरी तथा नवीं दुर्गा का नाम सिद्धिदात्री है। (पृ0: 19-20)

सूर्य पुराण में भी आद्यशक्ति जगदम्बा उमा के कई रूपों का उल्लेख है :

"स्वाहा-स्वधा-महाविद्या, मेधा लक्ष्मी, सरस्वती, सती दाक्षायणी सर्वशक्तिमयीशिवा, अपर्णा, एकपर्णा, एकैक, पाटला, उमा हैमवती, कल्याणी मातृका आप ही हैं। ख्याती, प्राज्ञ,

महामाया और लोक प्रसिद्ध गौरी भी आप ही हैं। गणाम्बिका-महादेवी, नन्दिनी जातवेदसी सावित्री, वरदा, पुण्या, पावनी, लोकविश्रुता, आयती, नियती, रौद्री, दुर्गा भद्र, प्रभाणिनी, कालरात्रि, रेवती, भूतनायिका, गौतमी, कौशकी, आर्याचण्डी कात्यायनी भी आप ही हैं अर्थात् ये सब आपके ही विभिन्न रूप हैं। (पृः 68)

इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि भक्त की तपस्या के फलस्वरूप दिए गए वरदान के वचन को पूरा करने तथा कहीं पर परिस्थिति वश मां को विभिन्न रूपों में प्रकट होना ही पड़ता है। राक्षस महिषासुर का वध कर वह महिषासुरमर्दिनी और चण्डमुण्ड पराक्रमी राक्षसों को मार कर वह चण्डमुण्डविनाशिनी कहलायी, गौरी और काली के रूप में उन्होंने रक्तबीज, धूम्रलोचन, निशुम्भ और शुम्भ आदि दैत्यों का संहार किया, कश्मीर की भूमि पर वह उमा के रूप में अवतरित हुईं तथा हिमालय और मेनका के यहां पार्वती कहलायी। हिन्दू धर्म कोश के अनुसार तो कश्मीर भूमि में वितस्ता सती का ही अवतार है।

सती का पुनर्जन्म

यहां पर उस प्रसंग का उल्लेख किया जा रहा है, जिसके द्वारा हम यह जान पाएंगे कि **माता सती** को वह देह त्याग कर उमा (पार्वती) के रूप में क्यों प्रकट होना पड़ा ? कथा त्रेता युग की है। भगवान विष्णु श्रीराम के रूप में जन्म ले चुके थे और वह पिता की आज्ञा का पालन करते हुए चौदह वर्ष का

वनवास बिता रहे थे। वनवास काल के अंतिम वर्ष में रावण ने छल से माता सीता का हरण कर लिया। इस घटना से प्रभावित होकर मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम मनुष्यों की भांति व्याकुल हो गए और विरहाग्नि में सीता जी को ढूंढने लगे। उनकी व्यथा देख प्रकृति भी द्रवित हो उठी। तभी भगवान शिव अपनी अर्द्धांगिणी सती के साथ मृत्युलोक का गमन कर रहे थे। अपने ईष्ट देव को विरह के रूप में देखकर भगवान शिव ने सच्चिदानन्द श्रीराम को नमन करते हुए उनकी जय-जयकार की और आगे बढ़ने लगे।

यह देख सती के मन में संशय उत्पन्न हुआ कि भगवान शिव तो ऐसे किसी सामान्य पुरुष को नमन नहीं कर सकते, जरूर इसमें कुछ रहस्य छुपा होगा। सती इस रहस्य को भगवान शिव से जानना चाहती थीं, पर उन्हें कोई स्पष्ट उत्तर नहीं मिल सका। अन्ततः सती ने स्वयं ही श्रीराम की परीक्षा लेनी चाही। वह आगे बढ़ने लगीं। मार्ग में उन्होंने बार-बार मन में विचार कर सीताजी का ही रूप धारण करना उचित समझा। सती ने सोचा कि जब वह 'सीता' के रूप में श्रीराम के समक्ष जाएंगी तो वह (श्रीराम) अपनी पत्नी को पाकर आनन्दित हो जाएंगे तथा वापसी पर वह शिव को बता देंगी कि उन्होंने सामान्य व्यक्ति को ही नमन किया था।

इस संदर्भ में गोस्वामी तुलसीदास रचित **श्रीरामचरितमानस** (पृः 58) का यह दोहा देखिए :

पुनि-पुनि हृदयँ बिचारू करि धरि सीता कर रूप
आगें होइ चलि पंथ तेहिं जेहिं आवत नरभूप।।

(अर्थात् बार-बार वह मन में विचार करने लगीं, कि क्या किया जाए, अंत में उन्होंने सीता का रूप धारण कर लिया। वह उस पथ पर आगे-आगे चल रही थीं जिससे मनुष्यों के राजा रामचन्द्रजी अग्रसर हो रहे थे।)

सती द्वारा सीताजी का रूप धारण करने की घटना उन पर भारी पड़ीं। इस घटना से भगवान शिव काफी विचलित हो गए। यद्यपि सती ने शिवजी के पास पहुंचने पर यह नहीं कहा कि श्रीराम उनके वास्तविक स्वरूप को जान गए थे और उन्होंने भ्रमवश शिवजी के कथन पर संशय किया। भगवान श्रीराम ने तो सीता के कृत्रिम रूप में भी सती को सहजता से पहचान लिया था और उसे दक्ष प्रजापति की कन्या तथा बृषकेतु (शिव) की पत्नी कहकर सम्बोधित किया था।

अनहोनी अटल होती है और वैसा ही हुआ। शिवजी के हृदय में इस घटना से विषाद उत्पन्न हुआ और वह सोचने लगे कि यदि वे अभी भी सती से प्रीति रखते हैं, तो भक्ति मार्ग लुप्त हो जाएगा और ऐसे में बड़ा अन्याय हो जाएगा :-

सतीं कीन्ह सीता कर बेषा, सिव उर भयउ बिषाद बिसेषा,
जौंअब करउँ सतीमन प्रीती, मिटइ भगति पथु होइ अनीती।।
(श्रीरा.च.म., पृ:61)

शिव जी ने उसी दिन से ही सती का अर्द्धांगिणी के रूप में त्याग कर दिया और सती भी अब वह देह त्याग कर किसी अन्यरूप में जन्म लेने के बारे में सोचने लगीं, क्योंकि सती को यह ज्ञात था कि अब महादेव उन्हें इस रूप में कदापि अर्द्धांगिणी के रूप में स्वीकार नहीं करेंगे। तत्पश्चात् सती किसी अन्यरूप में उन्हें वर रूप में पाने की कामना करने लगीं। कहते हैं कि इस घटना के बाद सत्तासी हजार वर्ष बीत जाने पर ही अविनाशी शिव ने समाधि खोली थीः-

बीतें संबत सहस सतासी
तजी समाधि संभु अबिनासी

(श्रीरा.च.म., पृ:64)

शिव ने जब समाधि खोली तो ईष्ट देव श्रीराम का स्मरण करने लगे और इधर सती भी श्रीराम से अपने अगले जन्म के बारे में प्रार्थना करने लगीं।

इस बीच दक्ष ने यज्ञ का अनुष्ठान कर सभी देवताओं को आमंत्रित किया, पर उन्होंने शिव को निमंत्रण नहीं भेजा। जब सती को अपने पिता के यज्ञानुष्ठान का पता चला तो उन्होंने शिव से भी अपने पिता के यहां जाने का आग्रह किया। शिव ने बिना निमंत्रण के जाना अस्वीकार कर दिया। उनके मना करने पर भी सती अपने पिता के यहां गयीं। वह अपने पति के अपमान से बहुत दुखी थी और क्रोध में आकर उन्होंने यज्ञ के हवन में अपने शरीर को ही भस्म कर दिया। इस घटना का

समाचार पाकर शिव बहुत क्रोधित हो उठे। उन्होंने अपने गणों को यज्ञ विध्वंस करने के लिए भेजा। स्वयं वे सती के मृत शरीर को लेकर तथा संतप्त होकर संसार में विचरण करने लगे। जहां-जहां सती के अंग गिरे, वहां-वहां तीर्थ बन गए। (हि. ध. कोश, पृ:649)

इस प्रसंग का उल्लेख श्रीरामचरितमानस (पृः 67-68) में सुविस्तार से मिलता है :-

सती मरनु सुनि संभु गन लगे करन मख खीस
जग्य बिधंस बिलोकि भृगु रच्छा कीन्हि मुनीस ।।64।।

(अर्थात् सती का मरण सुनकर शिवजी के गण यज्ञ विध्वंस करने लगे। यज्ञ विध्वंस होते देखकर मुनीश्वर भृगुजी ने उसकी रक्षा की)। पर इस समाचार को सुनकर क्रोध करके शिवजी ने वीरभद्र को भेजा। उन्होंने वहां यज्ञ विध्वंस कर डाला।

सती ने अंतर्ध्यान होने पर पूर्व ही हरि से यह वर ही मांगा था कि उनका जन्म-जन्म में शिवजी के चरणों में अनुराग रहे। इसी कारण उन्होंने हिमालय के घर में जाकर पार्वती के रूप में जन्म लिया :

सतीं मरत हरि सन बरु मांगा
जनम-जनम सिव पद अनुरागा
तेहि कारन हिमगिरि गृह जाई
जनमीं पारबती तनु पाई।।

(श्रीरा.च.मा., पृः 68)

श्रीरामचरितमानस में इस बात का उल्लेख है कि सहस्त्र वर्षों के बाद शिव को पाकर उमा ने पिछले जन्म में हुई भूल को सुधार। उन्होंने शिव से श्रीरघुनाथ जी की कथा कहने का विनम्र अनुरोध किया और भगवान शिव ने उन्हें प्रेमपूर्वक वह कथा सुनाई।

'महाभारत' ग्रंथ का संदर्भ

द्वापर युग के अंत में कुरुक्षेत्र का युद्ध हुआ। महाभारत ग्रन्थ में हमें इस युद्ध की जानकारी मिलती है। 'महाभारत' के 'भीष्म पर्व' में हमें इस देवी के रूप का वर्णन भी मिलता है। इस ग्रन्थ में भगवान शिव को 'उमापति' कहा गया है।

तप्यते तत्र भगवान तपो नित्यमुमापतिः।।

(अर्थात् वहां भगवान शिव उमापति नित्य तपस्या करते हैं।) -हि. ध. कोश, पृ:125

'नीलमतपुराण' में उल्लेख

छः मन्वन्तरों तक कश्मीर जलमग्न ही रहा। उस समय पर्वतों की ऊंचाइयों पर नाग, पिशाच एवं अन्य प्रजातियां रहा करती थीं। 'सतीसर' (सती का झील) नाम से वहां एक विशाल झील थी। कश्यप ऋषि के आह्वान पर सातवें मन्वंतर में जलोद्भव राक्षस का वध कर भगवान विष्णु ने भाई बलभद्र के सहयोग से पर्वत को चीरकर सती देश से पानी की निकासी की। तत्पश्चात् एक सुरम्य घाटी का निर्माण हुआ। देवताओं ने

इस रमणीक स्थल को अपना निवासस्थान बनाया जबकि देवियां नदियों के रूप में अवतरित हुईं। *सती जो पहले सतिसर के रूप में थीं अब वितस्ता के उद्गम के समय पानी के बुलबुलों के रूप में साक्षात् हो उठीं। कालांतर में वितस्ता के उद्गम स्रोत से अवतरित देवी भगवती उमा के रूप से जानी गईं।* यह वही उमा है जो हिमालय और मेनका की पुत्री कहलायी।

इस क्रम में यहां बताना प्रासंगिक होगा कि वितस्तोत्तरी (व्यथवोतुर) ही वितस्ता का उद्गम स्रोत है। वेरीनाग के निकट स्थित नीलनाग के पास आज भी यह कुण्ड विद्यमान है जहां कुण्ड के रूप में उमा देवी के दर्शन होते हैं।

नीलमतपुराण के अनुसार कश्मीर के निवासियों का उद्धार करने के लिए कश्यप ऋषि ने सती को वितस्ता के रूप में अवतरित होने का निवेदन किया था। महादेव ने त्रिशूल के प्रहार से 'वितस्ति' मात्र खुदाई कर वितस्ता नदी के जल को रसातल से बाहर निकाला। उन्होंने ही इस नदी को वितस्ता का नाम दिया :

तस्या नाम वितस्तेति कृतवान् शङ्करः स्वयम्।
वितस्तिमात्रं गर्ततु शूलेन कृतवान् हरः ।।260।।
रसातलगता येन विष्क्रान्ता सा सरिद्वरा
तस्माद्वितस्तेति कृतं नामैतस्याः स्वयंभुवा ।।261।।

(नील.पु. 'भाग दो' पृः 67)

'वितस्ति' का अर्थ ही है जिसका परिमाण द्वादशाङ्गुल

हो। शूल के प्रहार से भूमि पर वितस्ति मात्र गड्ढा बनने के कारण शंभु ने इसे वितस्ता के नाम से पुकारा। कश्यप ने घाटी के निर्माण के बाद सती, शची, गंगा, यमुना, दिति और कृष्णा से विशुद्ध निर्मल जल के रूप में अवतरति होने के लिए कहा, जिस का उल्लेख इस प्रकार मिलता है :-

कश्मीर नाम सुभगो देशो वै निर्मितोमया
तं देशमम्बुरानेन भावयध्वं शुचिस्मिताः ।।249।।

(नील. पु. दो, पृः 64)

नीलमत पुराण में उमा को शिव से भी बढ़चढ़कर माना गया है, क्योंकि शक्ति के बिना तो शिव, शव है। शक्ति ही उन्हें 'शव' से शिव बनाती है। तपस्विनी उमा के बारे में यह श्लोक द्रष्टव्य है :

वितस्ताख्या सरिद्रूपा देविं त्वं पर्वतात्मजे
तपस्विनी परा शर्वाच्छर्व पत्न्यसि नो नदी ।।314।।

(अर्थात् वितस्ता नाम की नदी का रूप धारण करने वाली हिमालय की पुत्री, ओ देवी। तुम नदी नहीं हो वरन् एक तपस्विनी हो, शर्वा (शिव) की पत्नी और शर्वा से भी बढ़कर हो।) नील. पु. दो, पृः 80

उमा देवी के बारे में एक अन्य उदाहरण द्रष्टव्य है :

"यैव देवी उमा सै कश्मीरा नृपसत्तम
आसीत् सरः पूर्वजलं सुरम्यं सुमनोहरम्"

(नील. पु. भाग-दो, पृः 4)

अर्थात् राजाओं के मध्य में उमा देवी कश्मीर का ही रूप है, जो पहले छः मंवंतरों तक हृदय को सम्मोहित करने वाली झील थी, कल्प के प्रारम्भ में वह इस मंवंतर में सुरम्य क्षेत्र बन गया।

भगवती उमा इस धरती पर देविका रूप में भी प्रसिद्ध हैं:

यैव देवीउमा सैव देविका प्रथिता भुवि

(नील. पु., दो. पृः 30)

और रुद्रतीर्थ में शिव, उमा के पावन पति रूप में विराजित हैं :

उमापति स्ताथापुष्यो रुद्रतीर्थ तथैवच

(नील. पु., दो. पृः 30)

नीलमत पुराण में उमा के बारे में उल्लेख है कि सातवें मंवतंर में उमा देवी वितस्ता तथा अन्य रूपों में प्रकट हुईं। इस पुराण को छठी-सातवीं शती में लिपिबद्ध करने के प्रमाण मिलते हैं।

कल्हण पण्डित ने 1148 से 1150 ई. में राजतरंगिणी की रचना कर नीलमत पुराण तथा पूर्व ग्रन्थों का उल्लेख किया है। राजतरंगिणी के प्रथम तरंग श्लोक 25 से 29 तक, सतीसर से घाटी निर्माण, नीलकुण्ड तथा वितस्ता के जन्म का प्रंसग वर्णित है।

★★★

उमा देवी का प्रथम उल्लेख

इस जगत के आदि और अंत भगवान महादेव के साथ अनादि काल से भगवती उमा इस जगत का कल्याण कर रही हैं। **उपलब्ध सामग्री के रूप में मां का प्रथम उल्लेख हमें केन उपनिषद् में मिलता है।** उससे पूर्व भी मां की चर्चा यत्र-तत्र सर्वत्र व्याप्त थीं लेकिन प्रकाशन उपकरण उपलब्ध न होने कारण वेद, उपनिषद्, पुराणादि ग्रंथों की पूंजी केवल श्रुति परम्परा के आधार पर ही सुरक्षित रहीं। गुरु अपने शिष्यों को भारतीय दर्शन, धर्म, गणित, संस्कृति, साहित्य, वास्तुशास्त्र, तर्क-भाषा एवं ज्योतिष शास्त्र तथा विज्ञानादि का ज्ञान कराते थे और शिष्य श्रुति परम्परा के अनुसार इस ज्ञानभण्डार को कण्ठस्थ कर भावी पीढ़ी के लिए सुरक्षित रखते थे। चिरकाल बाद ही हम इस विपुल भण्डार को पुस्तकाकार रूप में प्रकाशित कर सके हैं।

वेद, पुराणों एव उपनिषदों के रूप में जो सामग्री आज हमें उपलब्ध हो रही है इनका प्रकाशन ई0 पू.1500 से ई.पू 600 वर्ष तक हुआ है। यानी नौ सौ वर्षों के कालखण्ड में हम इस ज्ञान सागर को लिपिबद्ध कर पाए हैं। विद्वानों ने इस कालखण्ड को दो भागों में विभाजित किया है :-

(क) पूर्व वैदिक काल (1500 - 1000 ई.पू.)
(ख) उत्तर वैदिक काल (1000 - 600)ई.पू.)

भगवती उमा का उल्लेख जिस 'केन उपनिषद्' और **तैत्तिरीय आरण्यक** में मिलता है उनका रचनाकाल उत्तर वैदिक काल माना गया है। पूर्व वैदिक काल को ऋग्वैदिक काल भी कहा जाता है।

आरण्यक और उपनिषद् वैदिक साहित्य के तृतीय एवं चतुर्थ भाग हैं। चार वेदों (ऋग्वेद, सामवेद, अथर्वेद एवं यजुर्वेद) में से ही संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपनिषद् निकले हैं। प्रमुख बारह उपनिषदों में केन और तैत्तिरीय भी आता है। केन, सामवेद से तथा तैत्तिरीय, यजुर्वेद से सम्बंधित उपनिषद् हैं।

केनोपनिषद् (केन उपनिषद्) का नाम 'केन' इसलिए पड़ा, क्योंकि इसका प्रारम्भ ही 'केन' शब्द से होता है। 'केन' का अर्थ है-किस के द्वारा। इस का प्रारम्भ **'केनेषित पतति प्रेषित मनः'** वाक्य से होता है। इसका प्रतिपाद्य विषय ब्रह्मतत्व है। इस में उस सत्ता का अन्वेषण किया गया है जिसके द्वारा सम्पूर्ण विश्व का धारण एवं संचालन होता है। (हि. ध. कोश, पृः 118, 205)

इस उपनिषद् में देवी को **हैमवती** कहकर भी पुकारा गया है। हैमवती का अर्थ है हिमालय की पुत्री। **देवी भागवत** में भी उमा के हैमवती नाम का उल्लेख है :

"उमाभिधानां पुरतो देवी हैमवती शिवाय्।।

(हि. ध. कोश, पृः 705)

हैमवती से अभिप्राय है हिमावान् की पुत्री पार्वती, उमा। हिमवान के क्षेत्र को हैमवत प्रदेश कहा गया है। इस क्षेत्र में

सुलोचन पर्वत से लेकर पंजाब का पश्चिमी भाग और असम का पर्वत श्रेणी तक का सारा इलाका गिना जाता था। (संस्कृत हिन्दी अंग्रेजी शब्दकोश, पृ: 1008)

केन उपनिषद् चार भागों में विभाजित है। इस के तृतीय और चतुर्थ खण्ड में हैमवती उमा का उल्लेख मिलता है। उपनिषद् के प्रसंग में हैमवती उमा ने देवताओं की शक्ति का उपहास कर शक्ति स्रोत ब्रह्म का प्रतिपादन किया है। वह ब्रह्म और देवताओं के बीच हो रहे तर्क-वितर्क के समय प्रकट हुईं। ब्रह्म के बाद देवता इंद्र ने देदीप्यमान प्रकाश के रूप में भगवती के दर्शन किए। उन्हें प्रत्यक्ष देख देवराज इंद्र को एक दिव्य देवी का बोध हुआ, जो ब्रह्मज्ञानसम्पन्ना हैं।

इस उपनिषद् के तृतीय खंड में असुरों पर देवताओं की विजय का प्रंसग है और उमा देवी के आविर्भाव की कथा है। देवताओं ने ब्रह्म के आशीर्वाद एवं सहयोग से असुरों को परास्त कर दिया, पर इस विजयश्री के बाद उन्होंने ब्रह्म के सहयोग को ही नकार दिया। उन के इस अभिमान को ध्वस्त करने के लिए ब्रह्म ने दिव्य शक्तिशाली यक्ष का रूप धारण कर लिया और देवताओं के समक्ष प्रकट हो गए। देवताओं ने इस यक्ष का रहस्य जानने के लिए अग्नि और वायु देवता को भेजा, पर दोनों देवता अपना पराक्रम दिखाकर भी हतप्रभ व असफल होकर लौट आए।

जब राजा इंद्र में यक्ष का रहस्य जानने की उत्सुकता और बढ़ी तो वह शीघ्र ही "उस यक्ष के सम्मुख पहुंचे परंतु उनके

वहां पहुंचते ही वह यक्ष अन्तर्ध्यान हो गए और कुछ ही क्षणों के पश्चात् वहां हिमालयतनया शैलपुत्री उमा देवी साक्षात् प्रकट हो गईं। इन्द्र ने ब्रह्मविद्यास्वरूप आद्यशक्ति उमा को प्रणाम किया व पुछा कि वह यक्ष कौन था ?" (उपनिषद्ों में क्या है? पृ: 93)

उस यक्ष के सामने देवताओं की शक्ति क्षीण हो गई और उनका यह भ्रम टूट गया कि वे शक्तिशाली ब्रह्मा से भी बढ़कर हैं। आद्यशक्ति उमा के माध्यम से राजा इन्द्र को यक्ष का रहस्य जान पड़ा कि वह कोई और नहीं परमब्रह्म ही थे। उपनिषद् के अंतिम खण्ड में इन्द्र व आद्यशक्ति उमा के मध्य ब्रह्मविषयक संवाद है तथा इसी उद्धरण द्वारा आध्यत्म का उपदेश है।

इन्द्र के पूछने पर उमा देवी ने कहा, "वह यक्ष परमब्रह्म ही थे, जिनकी शक्ति से तुमने असुरों पर विजय प्राप्त की है। अग्नि वायु व इन्द्र इन तीन देवों ने ही अन्य देवों की अपेक्षा सर्वप्रथम ब्रह्म का साक्षात्कार किया, अतः इसी कारण इन्हें अन्य देवताओं में श्रेष्ठ माना जाने लगा।" (उपनिषद्ों, पृ: 94)

इस उपनिषद् में उमा को रुद्र की पत्नी कहा गया है।

तैत्तिरीय आरण्यक

तैत्तिरीय कृष्ण यजुर्वेद की एक शाखा है तथा इसके द्वारा संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् का सृजन हुआ है। तैत्तिरीय ब्राह्मण का एक अंश है- तैत्तिरीय आरण्यक, इसमें दस कांड हैं। 'तैत्तिरीय' का अर्थ है 'तीतर' और 'आरण्यक'

यानी 'वनों से सम्बंधित'। इन मंत्रों का गायन वनों में किया जाता था। वैसे भी वैदिक साहित्य प्रकृति की गोद में हीं सृजित हुआ है। इसके साथ तैत्तिरीय शब्द जुड़ने की भी एक रोचक कथा है।

ऋषि वैशम्पायन ने शिष्य याज्ञवल्क्य से जो ज्ञान वापस लौटाने को कहा था वही ज्ञान गुरु के अन्य शिष्यों ने तीतर बनकर ग्रहण किया अतः इस शाखा का नाम तैत्तिरीय पड़ा।

इस आरण्यक में आद्यशक्ति को रुद्र की अर्द्धांगिणी कहा गया है। साथ ही शिव को अम्बिका पति, उमा पति के नाम से भी सम्बोधित किया गया है।

तपस्विनी उमा

भारतीय वाङ्मय में तपस्या का बड़ा महत्व है। 'तप के बल से ही ब्रह्मा संसार को रचते हैं और तप के बल से ही विष्णु सारे जगत् का पालन करते हैं, तप के बल से ही शम्भु (रुद्र रूप से जगत् का) संहार करते हैं और तप के बल से ही शेष जी (शेषनाग) पृथ्वी का भार धारण करते हैं। (श्रीरा. च. म. पृः 74)। तप के बल से ही ऋषि विश्वामित्र ने महागायत्री देवी को प्रकट किया, भक्त प्रह्लाद की भक्ति से प्रसन्न होकर भगवान विष्णु नृसिंहावतार के रूप में प्रकट हुए और हिरण्यकशिपु का वध नाखूनों से किया, महर्षि कश्यप ने तपोबल से सतीसर झील को घाटी में परिवर्तित कर दिया, गोस्वामी तुलसीदासजी को श्रीराम के दर्शन हुए, पाण्डव पुत्र अर्जुन को पाशुपतास्त्र प्रदान करने के लिए भगवान शिव ने शिकारी (शवर) तथा पार्वती ने शिकारिन (शवरी) का रूप धारण कर लिया। भक्त के लिए भगवान क्या कुछ नहीं करते हैं।

पर उमा देवी की तपस्या किसी अन्य रूप में भगवान को पाने की नहीं थीं और न ही उन्हें किसी सिद्धि के लिए वरदान चाहिए था, उनका एकमात्र ध्येय यही था कि वह महादेव को कैसे पति के रूप में फिर से पा सकती हैं। कहते हैं कि उमा जैसी कठोर तपस्या किसी भी ऋषि, मुनि, ज्ञानी, धीर ने नहीं की है।

हिमालय के यहां गिरिराजनन्दिनी दिनोंदिन ऐसे बढ़ने

लगीं, जैसे शुक्लपक्ष में चंद्रमा की कलाएं बढ़ती हैं। उन्हें ऐसा प्रतीत होने था कि तपस्या करने की कोई आवश्यकता नहीं है और उमाकांत उन्हें इस जन्म में सहज रूप से ही मिल जाएंगे। उमा यही सोच रही थीं कि जो त्रिशूलधारी उनके पूर्वजन्म की अस्थि व भस्म धारण किए रहते हैं जब वे उन्हें इस जन्म में सयानी हुई देखेंगे तो कैसे ग्रहण नहीं करेंगे।

तभी उमा देवी को सम्बोधित करते हुए आकाशवाणी हुई, आकाशवाणी ने कहा, *'शिवे ! तुम कठोर तपस्या द्वारा भगवान शिव को पति रूप में प्राप्त करो, क्योंकि तपस्या के बिना ईश्वर को पाना .... असम्भव है।* **(ब्रह्मवैवर्तपुराण, पृः 565)**

कालांतर में वृषभवाहन महादेव हिमाचल प्रदेश में पधारे और अक्षयवट के नीचे विराजमान हो गए। इसकी सूचना पाकर शैलराज (हिमालय) प्रसन्न हो गए और वह पत्नी मेनका के साथ उनका आदर-सत्कार करने पहुंचे। जगदम्बा उमा भी माता-पिता की आज्ञा पाकर मंगलकामना के साथ महादेव के समीप यही सोचकर पहुंची कि वे उनके लिए ही आए हैं। उन्होंने पूजा-अर्चना कर सात बार भक्ति-भावना से महादेव की परिक्रमा की और आशीर्वाद पाया।

देवराज इन्द्र ने जब इस मिलन को देखा तो उन्होंने शीघ्रता से कामदेव को बुलाकर अक्षयवट की ओर प्रस्थान करने के लिए कहा ताकि कामदेव के आगमन से महादेव उमा के प्रति आसक्त हो जाएं। जब कामदेव उस स्थल पर पहुंचे तो

शिव समाधि में थे। शिव की समाधि भंग करने के लिए कामदेव ने पांचों बाणों का प्रयोग किया। शिव के मन पर तो कामदेव कोई प्रभाव नहीं छोड़ पाए पर इस पहल से कामदेव ही शिव के कोपभाजन बन गए। शिव ने अपने तीसरे नेत्र से कामदेव को ही भस्म कर दिया और उस स्थल को छोड़ कहीं अन्यत्र चले गए।

शिव के मन में अपने प्रति कोई आसक्ति न देखकर उमादेवी व्याकुल हो गईं। इतने में नारद जी प्रकट हो गए और उन्होंने उमा देवी को तपस्या करने की प्रेरणा दी। हिमालय और मेनका ने भी उन्हें तप की महत्ता से अवगत कराया। स्वयं भी उन्हें आकाशवाणी याद आयीं। अतः वे सब भोगों को तज कर महादेव शिव के चरणों में हृदय से समर्पित हो गईं और तपस्या के लिए अग्रसर हुईं :

उर धरि उमा प्रानपति चरना।
जाइ बिपिन लागीं तपु करना।।

(श्रीरा.च.म., पृः 74)

ब्रार्यांगन प्रसंग

एक प्रसंग यह भी आता है कि जगदम्बा को उमानगरी तक पहुंचाने में एक ब्रारी नाम की यक्षिणी भी सहायक रहीं। कालांतर में इसी 'ब्रारी' (बिल्ली) से ही इस क्षेत्र का नाम ब्रार्यांगन (बिल्ली का आंगन) भी पड़ा।

ब्रारितिनाम्न्या यक्षिण्या सख्यानीतां स्वमाङ्गनम।

(अर्थात् ब्रारी नाम की सखा यक्षिणी ने उमादेवी को ब्रार्यांगन पहुंचाया)। – श्रीउमा. पृ: 21

अघोर तपस्या

कहते हैं कि भगवती उमा ने कुछ समय गंगातट पर शिव को पाने की तपस्या की थी, जहां पर भगवान शिव ने उन्हें बालक ब्राह्मण के रूप में दर्शन देकर कहा था कि शिवजी उन्हें हिमालय में मिलेंगे। उमा देवी ने तब हिमालय की ओर प्रस्थान कर तपस्या की।

तपस्या के कालखण्ड में देवी ने एक हजार वर्ष तक मूल और फल खाएं तथा सौ वर्षों तक साग का सेवन किया। तीन हजार वर्षों तक वह पृथ्वी पर गिरे बेलपत्रों का ही सेवन करती रहीं। कुछ समय बाद उन्होंने पत्ते खाने भी छोड़ दिए। पत्ते यानी पर्ण भी न खाने कारण उमा का नाम पड़ा – **अपर्णा :**

पुनि परिहरे सुखानेउ परना।
उमहि नामु तब भयउ अपरना।

(श्रीरा.च.म., पृ:75)

इतनी कठोर साधना के बाद भी जब उमा देवी को शिव जी प्राप्त नहीं हुए तो वे प्रकृति के प्रतिकूल व्यवहार करने लगीं। उन्होंने ग्रीष्म में आग के मध्य, वर्षा ऋतु में खुले प्रांगण में, शीत में जल के भीतर और शरद् में बर्फ वाली रातों में भी निराहार रहने का प्रण किया। ब्रह्मवैवर्तपुराण (पृ:570) में उमा देवी की कठोर तपस्या का वर्णन इस प्रकार

किया गया है, "उस जगदम्बा ने पूरे एक वर्ष तक निराहार रहकर भक्तिभाव से तपस्या की। तदन्तर और भी कठोर तप आरम्भ किया। ग्रीष्म ऋतु में अपने चारों और आग प्रज्वलित करके वह दिन-रात उसे जलाये रखती और उसके बीच में बैठकर निरंतर मन्त्र जपती रहती थीं। वर्षा ऋतु आने पर श्मशान भूमि में शिवा सदा योगासन लगाकर बैठती और शिला की ओर देखती हुई जलकी धारा में भीगती रहती थीं। शीतकाल आने पर वह सदा जल के भीतर प्रवेश कर जाती तथा शरत् की भयंकर बर्फवाली रातों में भी निराहार रहकर भक्तिपूर्वक तपस्या करती थीं।

ऐसा तप कर उमा देवी कृशकाय हो गई, पर जब फिर भी उन्हें पति परमेश्वर प्राप्त नहीं हुए तो उन्होंने शिव को अगले जन्म में पाने की कामना लिए अग्निकुण्ड में भस्म होने का मन बनाया।

उमा देवी का शरीर क्षीण देखकर आकाश से गम्भीर ब्रह्मवाणी हुई- ब्रह्मवाणी का उल्लेख श्रीरामचरितमानस में (पृ:75) इस प्रकार हुआ है :-

देखि उमहि तप खीन सरीरा।
ब्रह्मगिरा भै गगन गम्भीरा।।

ब्रह्मवाणी ने उमा देवी को आश्वासन दिया कि अब उन्हें शिवजी जरूर मिलेंगे। भगवान शिव भी कहीं से अग्निकुण्ड के समक्ष उमा देवी को उद्यत होते देख रहे थे। कृपासिन्धु शिव

ब्राह्मण के रूप में उनके सामने प्रकट हुए। पर उमा देवी अपने प्रण पर डटी रहीं। उन्होंने अग्निकुण्ड में प्रवेश किया पर उनके तप के प्रभाव से अग्नि भी चंदन के समान शीतल हो गई। शिव उनकी कठोर तपस्या से प्रसन्न हुए और उनसे कहा कि अब वह अपने पिता के घर जाएं, उन्हें शिव वहीं प्राप्त होंगे।

उमानगरी में शिवजी ने स्वयंकर आकर उमादेवी की परीक्षा ली तथा सप्तऋषियों को भी देवी की परीक्षा के लिए भेजा।

सफल हुई साधना

हजारों वर्षों की कठोर तपस्या के बाद उमा देवी ने शिव को फिर से वर रूप में पाया। सप्तऋषियों तथा अन्य देवी देवतागणों के बीच हिमालय और मेनका ने अपनी पुत्री का विवाह भगवान भोलेनाथ के साथ रचाया। हिमालय के विशाल शिखर पर शिव-उमा (पार्वती) का स्वयंवर रचाया गया, जिसमें सूर्य, चन्द्रमा, इन्द्र, वरुण, यम, अग्नि, कुबेर आदि देवताओं ने भी भाग लिया। युगों के बाद दो अनादि दम्पतियों का पुनर्मिलन हुआ। अर्द्धांगिणी के रूप में उमा देवी को पाकर शिव जी, उमाकांत, उमाधव, उमापति तथा उमेश कहलाए। इनके दो पुत्र हुए-कार्तिकेय व गणेशजी उमा से छः मुखों वाले स्कन्द भी उत्पन्न हुए।

पंचस्तवी (पृ:106) के अंतिम खण्ड में शैलतनया और भगवान शंकर के विवाह का वर्णन कर पंचस्तवीकार ने गृहस्थी जीवन की श्रेष्ठता की और संकेत करते हुए कहा है :

अनाद्यन्ताभेद-प्रण्यरसिकापि प्रणयिनी
शिवस्यासीः यत् त्वं परिणय-विधौ देवी। गृहिणी।
सावित्री भूतानाम्, अपि यत् उद्भूः शैलतनाया।
तत् एतत् संसार-प्रणयन महानाटक सुखम्

(अर्थात् हे देवी। आप आदि और अन्तरहित अथाह असीम प्रेम का स्वादन करने वाली होकर भी, प्रेमरूपी विवाह की विधि में शंकर की पत्नी बनी थीं, प्राणियों को उत्पन्न करने वाली होने पर भी आप हिमालय की पुत्री रूप में उत्पन्न हुईं, यह सब संसार के प्रेम के महानाटक के सुख संकेत हैं।)

उमादेवी तपोभूमि उमानगरी में तब से ओंमकार रूप में पांच कुण्डों में विराजित हैं। इस स्थल को उन्होंने अपने तेज से आभा तथा तपस्या से सिद्धियां प्रदान कीं। जिस प्रकार उमा देवी को यहां आकर मनोवांछित फल मिला वैसे ही भक्तजनों की मनोकामनाएं भी यहां पूरी होती हैं, साधू-संत यहां सिद्धियों को प्राप्त करते हैं।

उमा और पार्वती – एक ही रूप

यहां कहना अप्रासंगिक न होगा कि उमा ही पार्वती और पार्वती ही उमा का रूप है। यदि भक्त इन दोनों के अस्तित्व को अलग-अलग कर देखते हैं तो उनके मन में यह संशय उपजना स्वाभाविक ही है कि वितस्ता के बुलबुलों के रूप में प्रकट होने वाली उमा हिमालय की पुत्री कैसे कहलायी? भाद्रशुक्लपक्ष त्रयोदशी को वितस्ता की जंयती होती है तो फिर उमा देवी का प्रकटोत्सव का दिन चैत्र शुक्लपक्ष नवमी कैसे हो सकता है ? यह भी अपने में रोचक प्रसंग है कि कैसे पार्वती का नाम 'उमा' पड़ा।

केन उपनिषद, हिन्दू धर्मकोश, हिन्दू कथा कोष, श्रीरामचरितमानस, सूर्य पुराण तथा नीलमत पुराण जैसे ग्रन्थों के अनुसार उमा और पार्वती, दोनों हिमालय और मेनका की पुत्री हैं अतः इनका एक ही रूप है। यह भी ध्यान देने योग्य है कि आद्यशक्ति के और भी विभिन्न रूप हैं जिनका उल्लेख हमने मां के अविर्भाव की कथा उपशीर्षक के अन्तर्गत किया है।

श्रीरामचरितमानस में भगवान शिव ने श्रीराम कथा सुनाते हुए अपनी अर्द्धांगिणी को दोनों नामों 'उमा तथा पार्वती' से सम्बोधित किया है। पार्वती के 'उमा' नाम का उल्लेख करते हुए गोस्वामी जी कहते हैं कि जब से उमा (पार्वती) हिमालय के घर जन्मी हैं तब से वहां सारी सिद्धियां और सम्पतियां छा

गई हैं। मुनियों ने जहां-जहां सुन्दर आश्रम बना लिए हैं, हिमालय नें उनको उचित स्थान दिया :

जब से उमा सैल गृह जाईं।
सकल सिद्धि संपति तहैं छाईं
जहं तहं मुनिन्ह सुआश्रम कीन्हे
उचित बास हिम भूधर दीन्हे।। *(पृ:68)*

यद्यपि श्रीरामचरितमानस का रचनाकाल सन् 1633 है, पर इसमें त्रेतायुग की कथा वर्णित है। इस ग्रन्थ (पृ:21-22) में 'उमापति' का वर्णन बार-बार हुआ है।

सो उमेस मोहि पर अनुकूला। करिहिं कथा मुद मंगल मूला।।
सुमिरि सिव सिव पाइ पसाऊ। बरनऊं रामचरित चित चाऊ।।

अर्थात् वे उमापति शिवजी मुझ पर प्रसन्न होकर (श्रीरामजी की) इस कथा को आनन्द और मंगल की मूल (उत्पन्न करने वाली) बनाएंगे। इस प्रकार पार्वती जी और शिव दोनों का स्मरण करके और उनका प्रसाद पाकर मैं चावभरे चित्त से श्रीरामचरित का वर्णन करता हूं।

नीलमतपुराण (क्रमशः पृ:73 व 69) में तो उमा देवी को हिमालय की पुत्री यानी पार्वती भी कहा गया है और साथ ही कश्मीर की देवी 'उमा' के नाम से भी सम्बोधित किया गया है:

"त्वमेव देवी कश्मीरां, त्वमेवोमा प्रकीर्त्तता"

अर्थात्, तुम कश्मीरा नाम की देवी हो, यह तुम हो जो उमा के रूप में महिमामंडित है।

नमोऽस्तु ते पर्वतराजकन्ये

अर्थात् हिमालय राजा की पुत्री तुम्हें मेरा नमस्कार है।

'उमा' नामकरण

एक उल्लेखनीय प्रंसग यह भी है कि जब गिरिसुता पार्वती शिव को फिर से पाने की कठोर तपस्या कर रही थीं, तो उनकी काया क्षीण होती गईं। यह देख उनकी मां मेनका ने उन्हें 'उ'. 'मा' कह कर सम्बोधित किया। मेनका ने शैलपुत्री को समझाया कि उनकी काया तप से क्षीण होती जा रही है। अतः ओ (उ) ऐसा मत कर (मा)। माता ने उन्हें तप से रोकने की चेष्टा की थी, पर पार्वती अपने पथ से कैसे अडिग हो सकती थीं। तभी से पार्वती का नाम उमा पड़ा।

सूर्य पुराण में भगवान शिव की महानता की कथा है। इस पुराण के अनुसार शिव ही परब्रह्म हैं और उमा (पार्वती) उनकी शक्ति हैं। जो लोग शिव और उमा में भेद बतलाते हैं वे अज्ञानी पुरुष हैं क्योंकि शिव और शिवा का वैसे ही भेद नहीं हो सकता, जैसे कि अग्नि और जलने में कोई भेद नहीं हुआ करता।

सूर्य पुराण में भगवान शिव को पार्वती पति, तथा उमापति कहा गया है। उदाहरणस्वरूपः- **"सदेवः पार्वतीपति"** (वह पार्वती के पति महादेव सर्वोपरि देवेश्वर हैं) **"देव मुमापतिम्** (उमापति देव), **"वाचकः प्रणवो यस्य ज्ञानमूर्तेरुमापते"** (जिस ज्ञान मूर्ति के धारण करने वाले उमा देवी के स्वामी का वाचक प्रणव (ओंमङ्कार) होता है।)

उमा को पार्वती सिंहवाहिनी भी कहा गया है अतः उमा–पार्वती का रूप एक ही है। यही जगदम्बा है, गौरी है, शिवा, कौशिकी (महासरस्वती), महामायादेवी, अम्बिका और भवानी है। आद्यशक्ति उमा देवी तो विविध नामों से प्रसिद्ध है। इन्हीं के हाथों लोक कल्याण के असंख्य कार्य हुए हैं। इन्हीं के अनुरोध पर महादेव जी ने गुप्त रहस्यों का वर्णन किया, जो बाद में विभिन्न पुराणों, तन्त्रों, आगमों में लिपिबद्ध हुआ। इन्हीं को शिवजी ने श्रीअमरनाथ गुफा में अमर कथा सुनायी। महादेव जी ने सबसे पहले इन्हीं को श्रीरामचरित की मंगलमय कथा सुनायी। माता का स्वरूप भारत की प्रत्येक नारी के लिए प्रेरणास्पद एवं कल्याणकारी है।

'उमा' से अभिप्राय

विभिन्न स्रोतों से उमा देवी तथा 'उमा' शब्द के बारे में जो उद्धरण मिलें हैं, उनको बिंदूवार यहां प्रस्तुत किया जा रहा है ताकि हम अपने विषय की गहनता और गम्भीरता को और पुष्ट हो कर समझने का प्रयास करें।

1. *उमा शब्द का अर्थ है, प्रकाश। 'उ' और 'मा' का अर्थ है कठोर तप करने वाली देवी।*

2. *उमा शब्द की व्युत्पत्ति 'कुमार सम्भव' में इस प्रकार हुई है :*

   उमेति मात्रा तपसो निषिद्धा
   पश्चादुमाख्यासुमुखी जगाम।

   'उ' 'मा' – यह कहकर माता (मेनका) ने उन्हें तपस्या से रोका। इसके अनन्तर उनका नाम उमा हो गया। (हि. ध. कोश, पृ: 125)

3. *'उमा' यानी महादेव की अर्द्धांगिणी। महादेव की कठोर तपस्या में लीन रहने कारंण एक दिन इनकी माता ने इनसे कहा था, 'उ' 'मा' कठोर तपस्या मत कर, तभी से इनका नाम उमा हो गया। (हिन्दी कथा कोष, पृ: 18)*

4. कश्मीरी भाषा में 'उमा' शब्द का अपभ्रंश 'व्वमा' भी प्रचलित है।

5. 'उमा' में 'उ' और 'मा' को पृथक करने से 'उ' का अर्थ ओंकार तथा 'मा' का अभिप्राय जगत्माता हो जाता है।
6. वर्णनमाला व स्वरों में पांचवा वर्ण 'उ' है जो शिव और ब्रह्म का नाम है तथा 'मा' लक्ष्मी का प्रतिरूप।
7. 'उमा' का अर्थ है गौरी, हरिद्र, कीर्ति और कांति।
8. हिन्दू धर्मकोश (पृ:125-126) में 'उमा' से जुड़े अन्य संदर्भ निम्न हैं:-

क. उमागुरुः — उमा का पिता हिमालय

ख. उमेशः — उमा के पति, महादेव

ग. उमासुतः — उमा के पुत्र कार्तिकय, गणेश

घ. उमावनः — उमा के विहार का काम्यकवन। उमावन में ही शिव-पार्वती का विवाहोत्तर विवाह हुआ था। इस वन के सम्बन्ध में शिव का शाप था कि जो कोई भी पुरुष इसमें प्रवेश करेगा, वह स्त्री हो जाएगा। मनु के पुत्र इल भूल से इस वन में चले गए। वे शाप के कारण तुरन्त स्त्री 'इला' बन गए।

ङ. उमा संहिताः — शिवपुराण की रचना के कुल सात खण्ड हैं। इसका पांचवा खण्ड उमा संहिता है।

च. उमा हैमवतीः जिस प्रकार शिव (गिरीश) पर्वतों के स्वामी कहे जाते हैं, वैसे ही उनकी पत्नी पार्वती (पर्वतों की पुत्री) कहलाती है। शिव ने हिमालय की पुत्री उमा से विवाह किया। केनोपनिषद् में प्रथम बार उन्हें उमा हैमवती कहा गया।

छ. उमाचतुर्थीः माघशुक्ल पक्ष चतुर्थी को इस व्रत का आचरण होता है। कुन्द के पुष्पों से स्त्रियां भगवती उमा का पूजन कर व्रत भी रखती हैं।

ज. उमामहेश्वरव्रतः इसके प्रारम्भ करने की तिथि के बारे में जो विभिन्न मत हैं वे इस प्रकार से हैं-पूर्णिमा, अमावस्या, चतुर्दशी अथवा अष्टमी में से किस भी दिन इस व्रत को प्रारम्भ किया जा सकता है।

झ. उमानन्दनाथः दक्षिणमार्गी शक्तों में तीन आचार्यों का नाम उनकी देवी भक्ति की दृष्टि से बड़ा ही महत्वपूर्ण है। ये एक छोटी गुरुपरम्परा उपस्थित करते हैं।

★★★

कैसे ज्ञात हुआ यह दिव्य स्थल

अभी तक हमने उमा देवी के आविर्भाव की कथा, ग्रन्थों में उनके प्रथम उल्लेख, भगवान शिव को पाने की उनकी कठोर तपस्या, साकार रूप तथा उमा-पार्वती की एकरूपता के बारे में अध्ययन किया, साथ ही उमा से अभिप्राय, उमानगरी के भौगोलिक संदर्भ तथा इस स्थल की वर्तमान स्थिति को भी जानने का प्रयास किया। अब प्रश्न यह उठता है कि उमानगरी का यह दिव्य स्थल भक्तों के लिए फिर से कब ज्ञात हुआ? इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता है कि श्रीअमरनाथ गुफा की तरह उमानगरी (ब्रार्यांगन) स्थल भी काफी समय तक भक्तों के लिए अज्ञात रहा। समय-समय पर यह स्थल ज्ञात होने के बाद भी राजनीतिक परिस्थितियों के कारण फिर से अज्ञात होते रहते थे। कश्मीर में आततायियों के आक्रमण के कारण वहां से भक्तों को पलायन करना पड़ता था और कई वर्षों बाद वापसी पर फिर से इन स्थलों की खोज आरम्भ होती थी।

कश्मीर में प्राचीन काल से ही शिव-शक्ति के आराधक रहे हैं, जिन्होंने अपने तपोबल से इन पावन तीर्थ स्थलों को फिर से खोज निकाला। ये स्थल भारतीय जनमानस के लिए प्रेरणा स्रोत रहे हैं। शिवभक्तों ने शिव-शक्ति के गुणों का वर्णन अपनी रचनाओं में भी किया है। सत्रहवीं सदी के मध्य में अली मरदान खान यहां के मुगल गवर्नर थे। सम्भवतया 1642 से

1646 के मध्य तक वह कश्मीर में रहे। इस बीच 1642 में उनके द्वारा श्रीनगर में चश्माशाही उपवन बनाने का भी उल्लेख मिलता है। कहते हैं कि वह अध्यात्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। एक दिन जब वह शालीमार बाग में टहल रहे थे, तो सामने महादेव पर्वत की ओर वह आकर्षित हुए। उनका आकर्षण इतना बढ़ता गया कि वह टकटकी लगा कर देखते ही रह गए, तभी उन्हें पर्वत के शिखर पर आद्यशक्ति उमा और त्रिलोकीनाथ शिव के दर्शन हुए। इस अद्भुत घटना को उन्होंने फारसी में इस तरह व्यक्त किया है :

> **उमा अज़ सोय चप बिनिगर जिया सदखुर्शीद ताबान्तर**
> **सवारश कुलबि नर बूद शबशाहेकि कन दीदम।।**
>
> *(हेरथ अखजान, पृ: 10)*

इस शिवस्तुति में रचनाकार कह रहा है कि उमा देवी शिव के बाईं ओर ऐसे चमकती हैं मानो सो सूर्य एक साथ दमक रहे हों। ऐसे वृषभवाहन शंकर और उमा के दर्शन उन को महादेव पर्वत पर हुए।

इससे बहुत पहले आठवीं सदी में वसु गुप्त ने 'शिवस्तोत्र' में, नवीं सदी में उत्पलदेव ने शिवस्तोत्रावली में तथा बाद में अभिनवगुप्त ने 'तन्त्रालोक' में शिव की महिमा गायी। इस धरती पर और भी शैवाचार्य हुए हैं जिन्होंने 'त्रिक दर्शन' का विकास किया।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

अठारहवीं सदी के मध्य में अफगानों के शासनकाल में

पं. शिवराम कौल 'जलाली' ने उमादेवी के आशीर्वाद से इस दिव्य स्थल को खोज निकाला। उस समय अमीर खान (1771-1776) यहां का गवर्नर था। तब पं जलाली कारदार के रूप में कार्यरत थे। उन्हें तत्कालीन गवर्नर ने कुटहार परगना में किसानों से कर वसूलने के लिए तैनात किया था। अपने कार्य क्षेत्र में वह ईमानदार और निष्ठावान थे। कहते हैं कि जब उत्तरसू क्षेत्र में वह ब्राह गांवों (उत्तरसू से 5 किलोमीटर) के आसपास किसानों से करवसूली कर रहे थे कि आचानक उन्हें आत्मज्ञान प्राप्त हुआ।

यहां कहना उचित होगा कि आध्यात्मिक चिंतन-मनन की ओर शुरू से ही उनका अधिक लगाव रहा। वे हर दिन भगवती की आरधना करते रहते थे। पं. माथुर कौल उनके धर्मगुरु थे। श्रीनगर से पं. माथुर कौल उन दिनों उत्तरसू गांव में ही आकर बस गए थे।

आत्मज्ञान प्राप्त होने के उपरान्त पं. शिवराम ब्राह के निकट **स्नुषा गांव** (वर्तमान में अपभ्रंश रूप 'सनसुम') में भगवती की साधना करने लगे। साधनापथ पर जाने से पूर्व उन्होंने कारदार पद से त्यागपत्र दे दिया था। यहीं पर मां ने उन्हें अवचेतन और पराचेतनावस्था में दिव्य दर्शनों से अभिभूत किया। मां ने उन्हें कहा कि वह घने वनों के बीच ओंमकार रूप में स्थापित है और यह ओंमकार पांच कुण्डों से बना है। जब भक्त ने मां से उस स्थल तक पहुंचने के मार्ग के बारे में पूछा तो मां ने अगले दिन एक कौए का अनुगमन करने के लिए कहा।

इस प्रकार भगवती उमा की कृपा से पं. शिवराम ने दिव्य कुण्डों के रूप में मां के दर्शन किए और इस स्थल पर भगवती की आराधना प्रारम्भ की। उन्होंने 1772 के आसपास इस स्थल पर बडे देवदार वृक्ष के साये तले धूनी प्रज्वलित की। यही धूनी बाद में 'धूनी सऽब' के नाम से जानी गई। उल्लेखनीय हैं कि 1772 में प्रज्वलित यह धूनी विस्थापन काल के प्रारम्भिक चरण में यानी जून 1990 तक निरंतर प्रज्वलित होती रही।

पं. शिवराम के चमत्कार

अपनी आत्मसिद्धि के फलस्वरूप पं. शिवराम धीरे-धीरे आसपड़ोस के गांव तक प्रसिद्ध हो गए। उनके माध्यम से खोजे गए स्थल के दशनार्थ लोगों की भीड़ उमड़ पड़ी। 1780 में इन चमत्कारों का समाचार श्रीनगर स्थित दरबार तक भी पहुंच गया। उस समय हाजी करीम दाद खान (1776-1783) यहां के गवर्नर थे। उनका शासन कर वसूली के लिए जाना जाता था। उन्होंने जनता से कर वसूली के नए-नए तरीके ढूंढ निकाले थे। कर के नियम इतने कठोर थे कि व्यापारियों ने फलदार वृक्ष ही काटकर ईंदन के रूप में बेचने शुरू किए। करीम दाद ने इस संत को दरबार में उपस्थित होने का फरमान भेजा पर तत्कालीन गर्वनर के सिपाही संत के चमत्कारों को देख उन तक पहुंच ही नहीं पाए और असफल होकर दरबार लौट गए।

कहते हैं कि संत पं. शिवराम के दोनों ओर सदैव दो ब्रारियां (बिल्लियां) विद्यमान रहती थीं। जब भी कोई दुर्भावना

से इस तीर्थ स्थल के परिसर में प्रवेश करता था तो ये ब्रारियां शेर का रूप धारण कर उन पर टूट पड़ती थीं। गवर्नर के सिपाही भी इन्हीं शेरों को देखकर भयभीत हो गए थे। उन्होंने करीमदाद खान को इस परिसर का वृतांत सुनाया था।

संत कौल के चमत्कार सुनकर तत्कालीन गवर्नर भी इस स्थल की ओर चल पड़ा। आज शासक ही पूर्व कर्मचारी की शरण में उमानगरी पहुंच गया। यह 13 अप्रैल, 1781 का दिन था। शरणागतभाव देख कर उस परिसर में विद्यमान शेर के रूप में दो ब्रारियां वापस अपने रूप में आ गईं। इस अफगान गवर्नर को वहां घण्टों प्रतीक्षा करनी पड़ी, क्योंकि संत शिवराम उस समय समाधि में थे। समाधि से वापस लौटने के बाद ही करीमदाद उनसे भेंट कर पाए।

पं. शिवराम की आध्यात्मिक शक्ति और अद्‌भुत चमत्कारों से प्रभावित होकर करीमदाद खान ने तत्काल प्रभाव से इस तीर्थ स्थल के संरक्षण एवं संवर्द्धन के लिए सरकारी पट्टे पर 1600 कनाल राजस्व मुक्त (कृषि भूमि) तथा कुट्हार वन क्षेत्र में कम्पार्टमेंट-68 स्वीकृत किया। **1782 में पं शिवराम ने शिवानन्द की पदवी प्राप्त की।** इस योगी ने पोषशुक्ल पक्ष प्रतिपदा तदुनसार 1790 के दिन कच्चे मिट्टी के बने मटके में प्राण त्याग दिए। बहुत बाद में उनके यह अवशेष इस स्थल पर प्राप्त हुए तत्पश्चात वहां स्वामी शिवांनद की समाधि बनाई गई।

गुरु-शिष्य परम्परा

स्वामी शिवानंद के शिष्य हुए **स्वामी रामानन्द**। रामानन्द के दो शिष्य हुए - **स्वामी राजानन्द** और **स्वामी शुद्धानन्द**। स्वामी राजानंद ने बालक **वासानन्द** को तथा स्वामी शुद्धानंद ने **शिवानन्द (द्वितीय)** को यज्ञोपवीत संस्कार कर उन्हें अपना शिष्य तथा तीर्थ स्थल का महंत बनाया। शिवानंद द्वितीय के समय भी तीर्थ स्थल को 240 एकड़ (राजस्व मुक्त) भूमि प्रदान किए जाने के साक्ष्य मिलते हैं।

स्वामी शिवानन्द द्वितीय ने 1931 में **स्वामी कृष्णानंद** को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया और स्वामी कृष्णानंद ने 1951 को **स्वामी सत्यानंद** को इस तीर्थ स्थल का मंहत बनाया। स्वामी सत्यानंद इस तीर्थ के सम्भवतया अंतिम स्वामी थे, जो निर्वासनकाल में फरवरी, 2000 में जम्मू में कालकलवित हुए।

तीर्थ भूमि का अधिग्रहण

समय-समय पर तीर्थ भूमि का सरकार द्वारा अधिग्रहण होता रहा। महाराजा प्रताप सिंह के शासन काल के दौरान 636 कनाल तथा 1951 में जम्मू कश्मीर सरकार ने भूमि सुधारों के तहत अधिकांश चल-अचल सम्पति का अधिग्रहण किया। वर्तमान में इस तीर्थ स्थल की चल-अचल सम्पति का अधिग्रहण और अतिक्रमण जारी है। विस्थापन काल से पूर्व तक तीर्थ के पास अब केवल दो भागों में 364 कनाल भूमि ही शेष बची है।

साधु-संतों का आगमन

समय-समय पर यहां विशेषकर दक्षिण भारत तथा अन्य प्रांतों व घाटी से भी साधु संतों का आना जाना लगा रहा। इन संतों ने भी इस स्थल को आत्मज्ञान के आधार पर सिद्धपीठ कहा। 1782-1862 के मध्य यहां हागुंल गुंड के संत मिर्जा काक और लधुव से संत जीवन साहिब आए। 1862 में स्वामी शिवानंद द्वितीय को वेदांत की शिक्षा से दीक्षित कराने के लिए कश्मीर के संस्कृताचार्य शंकर पण्डित और गोश काक पधारे। श्रीशंकर पण्डित गौतमनाग के श्री सर्वानन्द और गोशगुंड के सर्वानन्द द्वितीय के भी गुरू थे। 1910 के आसपास यहां त्रेहगांव (कश्मीर) से श्री प्रज्ञा चैतन्य आए तथा कई वर्षों तक यहां मां की पूजा अर्चना की। दक्षिण भारत से स्वामी गंगानंद भी उन्हीं दिनों यहां पहुंचे और मां के आशीर्वाद से सिद्धियां प्राप्त की।

1954 में दक्षिण भारत से यहां परमहंस रामकृष्णानंद, स्वामी भास्कानंद, स्वामी गांगानंद व स्वामी कृष्णानंद के आने का उल्लेख है। इन संत महात्माओं ने भी यहां ज्ञान प्राप्त किया तथा सिद्धियां पायीं। इन संतों ने भी इस तीर्थ को सिद्धिदायक और मोक्षदायक कहा। इन का यह भी कहना था कि कोई भी श्रद्धालु इस स्थल पर योग व तप के द्वारा आध्यत्मिक शक्ति प्राप्त कर सकता है। (संदर्भ 'श्रीउमा' प्रस्तक से)

कैसे बसी उमानगरी

उमानगरी गांव के पास उत्तरसू में तो शुरू से ही लोग बसने के लिए आ गए थे पर इस गांव में स्वामी शिवानंद के आगमन के साथ ही भक्त आते गए और बसते गए। स्वामी रामानंद के समय यानी 1790 से 1862 के बीच यहां काफी कश्मीरी पण्डित बसने लगे थे। मंदिर की चल-अचल सम्पत्ति पर ही लोग निवास करने लगे, क्योंकि वह तीर्थ में अपनी सेवाएं प्रदान करने के उद्देश्य से आए थे। बाद में यहां मुस्लिम समुदाय के लोग भी बस गए। आज यह गांव कश्मीरी पण्डितों से नगण्य है। ये समुदाय आतंकवाद की काली छाया के बाद जम्मू तथा देश के अन्य प्रांतों में शेष कश्मीरी विस्थापितों की भांति शरण लिए हुए हैं।

विस्थापन से पूर्व इस गांव में सौ से अधिक कश्मीरी पण्डित परिवार रहते थे। प्रतिदिन लोग मंदिर परिसर के बाहर प्रवाहित जल से अपने को अभिमंत्रित करते थे, इस शुद्धजल से नहाते थे, तत्पश्चात् ही पूजा अर्चना के लिए मंदिर परिसर में प्रवेश किया करते थे। उल्लेखनीय है कि मां की अनुकम्पा तो समस्त भारतीय जनमानस पर है ही, पर यहां के स्थानीय लोगों पर उनकी विशेष अनुकम्पा रही है। यहां पर कोई भी परिवार ऐसा नहीं रहा, जो जीवन यापन के लिए कष्ट भोग रहा हो। सभी सम्पन्न हैं।

उपसंहार

मां भगवती उमा तो भारतीय जनमास की अधिष्ठात्री देवी है, आद्यशक्ति है, सिद्धिदायिनी, सिद्धिरूपणी और ब्रह्मज्ञान सम्पन्ना हैं। जो शक्ति आद्य है, भगवान शिव की अर्द्धांगिणी हैं, उस परमशक्ति के बारे में उपलब्ध ग्रन्थों के आधार पर भी वर्णन करना हमारे

★★★

सम्मर्थ्य के बाहर है। वह करूणा की सागर हैं। ईश्वर ने स्वंय भी कहा है कि वह केवल भक्तों के वश में ही रह सकते हैं। मां हमें भी ऐसी ही भक्ति का वरदान दें।

उमानगरी में ओमंकार रूप में पांच कुण्डों में विराजमान भगवती उमा हम सब का कल्याण करें। यह ओमंकार का स्वरूप भारतीय दर्शन को प्रतिपादित करता है तथा सृष्टि के मूलभूत पांच तत्त्वों का प्रतीक है। इनमें सद्, चित् और आनन्द की परा शक्ति है, जागृति, स्वप्न और सुप्तावस्था का रहस्य है। कुण्डों के ओमंकार रूप में ॐ तीन ध्वनियों 'अ' 'उ' तथा 'म' से बना है। इन्हीं ध्वनियों में जहां सत्, रज और तमोगुण समाहित हैं वही मनुष्यों के तीन दोष वाक्, पित और कफ को भी ये प्रतिध्वनित करते हैं।

इस पुस्तिका के माध्यम से हमने उमा देवी के सिद्धपीठ का वर्णन करने का प्रयास किया है। यह प्रयास अंतिम नहीं हो सकता पर इतना अवश्य कहा जा सकता है कि यह पहल आगामी पहलों के लिए जरूर ही सहायक सिद्ध हो सकती है।

समय आने वाले कल में अवश्य ही करवट लेगा और वर्तमान परिस्थितियां बदलेंगी ही, मां उमा देवी के भक्त जो इस समय कश्मीर से दूर निर्वासन में जी रहे हैं, अवश्य ही अपने पैतृक घरों की ओर लौटेंगे और घाटी के तीर्थ स्थलों में फिर से घड़ियालों की गूंज चहुं ओर प्रतिध्वनित होगी।

भक्तों की मां से यही प्रार्थना है कि निवार्सित कैम्पों से घरों तक के मार्ग के बीच जो अवरोधक खड़े हैं वे ढह जाएं, भगवान शिव नीलकंठ बनकर आतंकवाद के विष को ग्रस लें और उमानगरी में भगवती उमा मंदिर के प्रांगण में फिर से अखण्ड ज्योति (धूनी सऽब) प्रज्वलित हो उठे। तथास्तु।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:

1. हिन्दी कथा कोष : प्रकाशक, हिन्दुस्तान एकेडमी उत्तरप्रदेश, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण : 1954

2. हिन्दी धर्म कोष : सम्पादक डा. राजबली पाण्डेय, प्रकाशक उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, तृतीय संस्करण : 2003.

3. द नीलमतपुराण : (दो भागों में अंग्रेज़ी में मूलपाठ सहित) डा. वेद कुमारी घई। प्रकाशक : कल्चरल अकादमी, जम्मू, द्वितीय संस्करण प्रथम भाग : 1988, द्वितीय भाग : 1994.

4. श्रीरामचरितमानस : गोस्वामी तुलसीदास (टीकाकार : हनुमान प्रसाद पोद्दार), प्रकाशक : गीताप्रेस गोरखपुर, पुणर्मुद्रण : सं0 2061.

5. ब्रह्मवैवर्तपुराण : प्रकाशक : गीता प्रेस, गोरखपुर, पांचवा संस्करण : सम्वत् 2059.

6. सूर्य पुराण : सम्पादक : डा. चमन लाल गौतम, प्रकाशक : संस्कृति संस्थान, बरेली 243003

7. "उपनिषदों में क्या है?" : पंकज दीक्षित, प्रकाशक : पुस्तक महल, दिल्ली, संस्करण : 2003

8. राजतंरगिणी : कल्हण पण्डित (संस्कृत से अंग्रेज़ी में अनुवाद रणजीत सीताराम पण्डित), प्रकाशक : साहित्य अकादमी, नई दिल्ली।

9. पंचस्तवी : (टीकाकार पं. प्रेमनाथ शास्त्री) प्रकाशक : विजयेश्वर पञ्चाङ्ग कार्यालय, जम्मू ।

10. श्रीदुर्गासप्तशती : अनुवादक-पाण्डेय पं. श्री रामनारायण दत्त जी शास्त्री 'राम', प्रकाशक : गीताप्रेस, गोरखपुर, संस्करण : सम्वत् 2061.

11. श्रीउमा : प्रकाशक, स्वयमानंद आश्रम, श्रीनगर, द्वितीय संस्करण : 1975

12. संस्कृत हिन्दी - अंग्रेजी शब्दकोश : सम्पादक डा. शिवप्रसाद, भारद्वाज, अनिल प्रकाशन 2619-20, न्यू मार्किट, नई सड़क, दिल्ली।

13. हेरथ अख जान : प्रो. भूषण लाल कौल, प्रकाशक : संजीवनी शारदा केन्द्र, आनन्द नगर, बोड़ी, जम्मू

संजीवनी शारदा केन्द्र

(एक संक्षिप्त परिचय)

शारदा के वैभवशाली स्वरूप की प्रतिष्ठा बनाये रखने हेतु तथा समस्त राष्ट्रभक्तों में विशेषकर विस्थापित देशवासियों में अपने धर्म, समाज एवं राष्ट्र के प्रति अनुराग एवं कर्तव्य भावना को सुदृढ़ बनाने हेतु-'संजीवनी शारदा केन्द्र' की स्थापना, शारदा अष्टमी, 2 सितम्बर 1995 ई. को जम्मू क्षेत्र के आनन्द नगर, (बोड़ी) में हुई।

शारदा माता, सरस्वती एवं दुर्गा दोनों का सूचक है। ज्ञान, विवेक एवं विद्या की देवी सरस्वती तथा धैर्य, सामर्थ्य एवं शक्ति की देवी दुर्गा (पार्वती) दोनों शारदा में समाये हैं अत: एक बार पुन: शारदा पीठ (कश्मीर) की गरिमा आदित्य रूप में संसार के आकाश में चमक उठे, यही संकल्प 'संजीवनी शारदा केन्द्र' की स्थापना में निहित हैं।

यही संकल्प साकार करने हेतु तथा अपने गौरवशाली पूर्वजों की धरोहर की क्षतिपूर्ति के लिये 'संजीवनी शारदा केन्द्र' ने अपनी गतिविधियां चलाने के लिए कुछ कार्यक्षेत्र एवं लक्ष्य निर्धारित किये हैं यथा -

1. संजीवनी भवन का निर्माण।
2. मुख्य धार्मिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक उत्सवों का सामूहिक आयोजन।
3. जनहित अभियान के अन्तर्गत व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्रों की व्यवस्था।
4. इतिहास एवं संस्कृति के सदंर्भ में शोध-कार्य तथा शारदा कश्मीर व्यबसाइट का प्रवर्त्तन।
5. शारदा लिपि एवं संस्कृत भाषा का पठन-पाठन।
6. एक भव्य पुस्तकालय की स्थापना।
7. प्रकाशन विभाग की स्थापना।

अपने कार्यक्रमों को सुचारू ढंग से चलाने के लिये आनन्द नगर (बोडी) में खरीदे एक भूमि खण्ड पर संजीवनी भवन निर्माण के पहले चरण में एक भव्य सभागार (शारदा भवन) का निर्माण हुआ है।

युवावर्ग को स्वावलम्बी बनाने के उद्देश्य से योजना बद्धरूप से कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं। इस तरह केन्द्र को एक बहुआयामी संस्थान में

विकसित करने की योजना है। इसी संदर्भ में केन्द्र द्वारा एकवर्षीय पाठ्यक्रम पर आधारित अभी तक कोई 100 युवकों को **बिजली-रेडियों-टी.वी. का प्राथमिक प्रशिक्षण** दिया जा चुका है। इस समय यह युवक या तो अपना निजी काम कर रहे हैं या प्रशिक्षण के आधार पर उद्योगों में कार्यरत हैं।

केन्द्र के परिसर में ही युवावर्ग के कम्प्यूटर प्रशिक्षण के लिये **'शारदा कम्प्यूटर शिक्षा संस्थान'** का निर्माण हुआ है। यह संस्थान युवकों को भिन्न-भिन्न पाठ्यक्रमों के आधार पर प्रशिक्षण दे रहा है। अभी तक कोई 120 युवक प्रशिक्षण पा चुके हैं। अभी संस्थान की कार्यशाला में छः कम्प्यूटर लगे हैं और एक साथ 12 प्रशिक्षार्थियों को प्रशिक्षण देने की पूर्ण सुविधा उपलब्ध है।

शोध की दिशा में केन्द्र प्रयासरत है। कश्मीरी पण्डितों की सांस्कृतिक पहचान को सर्वव्यापक एवं सर्वसुलभ बनाने के उद्देश्य से पुरातत्त्व, इतिहास, धर्म, दर्शन, भाषा, साहित्य, लिपि, लोक जीवन और लोक कलाओं के क्षेत्र में **अनुसंधान कार्य** को प्रोत्साहन देकर कार्यशालाओं एवं विचार गोष्ठियों का आयोजन किया जा रहा है।

केन्द्र द्वारा गठित समाज सुधार एवं संस्कार समिति के अन्तर्गत विशेष धार्मिक संस्कारों को सामूहिक रूप से संपन्न कराने की योजना के अन्तर्गत कई बार **सामूहिक यज्ञोपवीत संस्कार** समारोहों का आयोजन केन्द्र द्वारा हुआ है जिन में कोई 124 बालकों को उपनयन संस्कार से संस्कारित किया गया। भविष्य में भी ऐसे संस्कार समारोह आयोजित कराने की योजना है।

कार्यक्षेत्र के अंतर्गत केन्द्र की **महोत्सव समिति** मुख्य धार्मिक एवं सांस्कृतिक उत्सवों का सामूहिक आयोजन करती है। मुख्य रूप से **शारदा अष्टमी** (जो केन्द्र का स्थापना दिवस भी है) और **महाशिवरात्रि महोत्सव** का आयोजन उल्लेखनीय है। इन उत्सवों में समाज के प्रत्येक वर्ग के लोग भाग लेते हैं। इन उत्सवों में प्रसिद्ध विद्वानों एवं सन्त महात्माओं को आमंत्रित करके जनता को उनके बहुमूल्य विचार सुनने का अवसर प्रदान किया जाता है। शारदा अष्टमी समारोह के अवसर पर एक महायज्ञ रचाने के अतिरिक्त समाज के प्रति समर्पित किन्हीं दो महानुभवों को **'शारदा-पुरस्कार'** से सम्मानित किया जाता है। अभी तक आठ महानुभावों को पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका हैं। महाशिवरात्रि समारोह के अवसर पर केन्द्र की ओर से मुद्रित एक **वार्षिक केलेण्डर** जनता को भेंट किया जाता है।

समय-समय पर केन्द्र द्वारा शारदा लिपि के पठन-पाठन एवं लेखन की कक्षाओं का आयोजन किया जाता है। इसके अतिरिक्त **'संस्कृत भाषा में सम्भाषण'** की कक्षाओं की व्यवस्था भी की जाती है।

भारतीय जीवन मूल्यों के प्रचार हेतु उपयोगी साहित्य के प्रकाशन एवं वितरण की व्यवस्था की केन्द्र द्वारा की जा रही है। इस संदर्भ में शारदा-ग्रंथमाला के अन्तर्गत 'शारदा' नाम की पुस्तिका का प्रकाशन हुआ है। एक और पुस्तिका 'हेरथ अख ज़ान' का प्रकाश भी हो चुका है। इस के अतिरिक्त केन्द्र के प्रकाशन विभाग द्वारा श्रीभट्ट के विषय में पर्याप्त जानकारी प्रकाशित की गई है। साथ ही महाराज ललितादित्य का प्रामाणिक जीवन चरित के प्रकाशन का कार्य चल रहा है।

शारदा कम्प्यूटर संस्थान को 'इण्टर-नेट' के साथ जोड़ दिया गया है। इण्टरनेट पर केन्द्र का ई-मेल पता है : shardakendra31 @rediffmail.com इसके साथ ही संजीवनी शारदा केन्द्र की अपनी स्वतन्त्र **'व्यब साईट'** का प्रवर्तन भी हो चुका है। 'व्यबसाईट' के लिये पता है : www.shardakashmir.org

इस 'व्यबसाईट' पर निम्ननलिखित उपशीर्षकों के अंतर्गत महत्वपूर्ण सामग्री (विशुद्धरूप में) उपलब्ध होगी -

कश्मीर से संबन्धित, इतिहास, साहित्य, संस्कृति, वास्तुकला, चित्रकला, तीर्थस्थल, डाटा बैंक आदि।

'संजीवनी शारदा केन्द्र' एक पंजीकृत न्यास की देख-रेख में अपनी गतिविधियां चलाने में क्रियाशील है गतिविधियों को सुचारू ढंग से चलाने हेतु कई समितियों का गठन किया गया है। यथा :

1. व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्र समिति।
2. समाज सुधार एवं संस्कार समिति।
3. निर्माण एवं संस्थान कोषवृद्धि समिति।
4. महोत्सव समिति/शोध एवं पुस्तकालय समिति।

प्रत्येक समिति अपने-अपने कार्यक्षेत्र में प्रयत्नशील है और यथा संभव सामाजिक विकास में अपना योगदान दे रही है।

स्वर्ण सदृशी गोरी भुजद्वय समन्विताम्।
नीलारविन्द वामेन पाणिना विभ्रतीं सदा।।
सुशुक्लं चामरं धृत्वा भर्गस्याङ्गे. च दक्षिणे।
विन्यस्य दक्षिणं हस्तं तिष्ठन्ती परिचिन्तये।।

Printed at : M. K. Enterprises # 94191-87685, 85791